हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद

हिन्दी की नख-शिख परम्परा

एवं

बलभद्र कृत 'सिख-नख'

हिन्दी की नख-शिख परम्परा

एवं

बलभद्र कृत

"सिख-नख"

सम्पादक तथा भूमिका-लेखक

डॉ० सज्जन राम केणी

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सर परशुरामभाऊ महाविद्यालय, पूना

हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद

१९८०

आदरणीय
डॉ० विश्वनाथप्रसाद मिश्र को
सादर

अनुक्रम

पृष्ठांक

आमुख क-ख

सम्मति ग-घ

निवेदन च-छ

भूमिका १-४०

१. **पूर्व रीतिकालीन आचार्य-कवि बलभद्र** १

२. **बलभद्र पर शोध-कार्य या अध्ययन** १

३. **बलभद्र विषयक जानकारी देनेवाले ग्रंथ** २-३

[(अ) खोज-विवरणात्मक ग्रंथ—(ब) साहित्यिक इतिहास-ग्रंथ (क) काव्य-संग्रह—(ड) आलोचनात्मक ग्रंथ—(फ) अन्य]

४. **बलभद्र की संक्षिप्त जीवनी एवं साहित्यिक परिचय** ३-७

नाम ४

वंश-परिचय तथा निवास-स्थान ५

जन्म-तिथि एवं अवसान-तिथि ५

आश्रयदाता ६

बलभद्र का रचना-काल ६

बलभद्र की रचनाएँ ६

५. **नख-शिख परम्परा का मूल स्रोत** ७-१४

६. **हिन्दी की नख-शिख परंपरा** १४-१७

७. **बलभद्र का 'सिख-नख' : ग्रंथ-परिचय** १७-२४

ग्रंथ का स्वरूप १७

अलंकृत शैली १८

बलभद्र की भाषा २२

[तत्सम शब्द; तद्भव शब्द; देशज शब्द; अरबी शब्द; फारसी शब्द]

८. **पाठ-सम्पादन** — २४-४०

उपलब्ध सामग्री — २४-३१

(१) हस्तलिखित ग्रंथ — २४

(२) हस्तलिखित टीका-ग्रंथ (मूलसहित) — २७

(३) मुद्रित ग्रंथ — ३०

(४) संकलन-ग्रंथ — ३०

प्राप्त सामग्री का परीक्षण — ३१-३५

प्रतियों की विशेषताएँ — ३५-३९

पाठ-निर्धारण-नीति — ४०

संकेत-सूची — ४२

विषयानुक्रम (अंगों का वर्णन-क्रम) — ४३-४४

'सिख-नख' ग्रंथ का पाठ — ४५-९६

परिशिष्ट : — ९७-१२८

(१) शब्द-कोश — ९९-११६

(२) प्रतीकानुक्रम — ११७-११९

(३) नामानुक्रमणिका—१ : ग्रंथकार — १२०-१२१

(४) नामानुक्रमणिका—२ : ग्रंथ — १२२-१२४

(५) संदर्भ-ग्रंथ — १२५-१२८

प्रकाशकीय

मध्ययुगीन रीतिकाव्य-परंपरा के अन्तर्गत 'शिखनख' की परंपरा का पल्लवन एवं बलभद्र मिश्र विरचित प्रस्तुत 'सिखनख' रचना उस परंपरा की एक महत्वपूर्ण और अतिशय लोकप्रिय कड़ी है। सन् १८९४ ई० में काशी के भारत जीवन प्रेस ने इसे प्रथम बार मुद्रित किया था, किन्तु इस संस्करण की प्रतियाँ अब प्राप्त नहीं होतीं। एक अहिन्दीभाषी हिन्दी विद्वान् डॉ० सज्जनराम केणी ने भारत जीवन प्रेस के संस्करण के अतिरिक्त कुछ अन्य हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर अतिशय श्रम और वैदुष्यपूर्वक, इस ग्रंथ का एक वैज्ञानिक संस्करण प्रस्तुत करके विशेष सराहनीय कार्य किया है। ग्रंथ की भूमिका और पुरानी ब्रजभाषा टीका के कारण निश्चय ही इसकी उपयोगिता अपेक्षाकृत बढ़ गई है। आशा है रीतिकालीन शोधकर्त्ताओं तथा रीतिकाव्य के रसज्ञ पाठकों में यह ग्रंथ विशेष रूप से समादृत होगा।

हिन्दुस्तानी एकेडेमी,
इलाहाबाद-२११००१
फरवरी २५, सन् १९८० ई०

उमाशंकर शुक्ल
सचिव

आमुख

बलभद्र मिश्र का नाम हिन्दी के लिए अपरिचित नहीं है। किन्तु उनके भाई आचार्य केशवदास के अधिकाधिक उल्लेख की तुलना में वे अवश्य अल्प परिचित-से रहे हैं। हिन्दी रीतिशास्त्र एवं रीतिकाव्य की चर्चा के प्रसंग में उनका उल्लेख ससम्मान किया जाता है। उनके द्वारा प्रणीत ग्रन्थों में से 'दूषण-विचार' तथा 'सिखनख' इस परम्परा के उल्लेखनीय ग्रन्थ रहे हैं और 'सिखनख' का गौरव तो यहाँ तक है कि उस पर रीतिकालीन कई अच्छी टीकाएँ भी रची गयीं और अबतक उपलब्ध होती हैं। वंश-परम्परा से वे कवि-वंश के गौरव थे। उनके पितामह श्रीकृष्ण मिश्र का 'प्रबोध चन्द्रोदय' न केवल संस्कृत साहित्य के इतिहास में सम्मानित ग्रन्थ रहा है, अपितु हिन्दी में उसके अनेक अनुवाद और रूपान्तर भी हुए हैं और उनकी भी एक दीर्घ परम्परा है। हिन्दीतर भारतीय भाषाओं में से भी कुछ में उसे अनूदित किया गया है। बलभद्र के भाई केशवदास जी के ग्रन्थों को तो चिन्तामणि, उन चिन्तामणि ने जिन्हें कुछ विद्वान् रीतिकाल के प्रवर्तन का श्रेय देते हैं, ने भी पढ़ा था और इस बात का 'श्रृंगार-मंजरी' में सादर उल्लेख भी किया है। बाद में रीतिशास्त्र के अनेक लेखकों तथा अभ्यासकों ने उनके ग्रन्थों पर टीकाएँ कीं और उन्हें सम्मानपूर्वक स्मरण किया। बलभद्र को भी इस बात का गौरव प्राप्त है कि बाद के लेखकों ने उनके ग्रन्थ 'सिखनख' की टीकाएँ प्रस्तुत करने में अपने को कृतश्रम माना। उक्त ग्रन्थ का वर्षों पूर्व भारत जीवन प्रेस, काशी से दो बार मूल एवं टीका सहित प्रकाशन भी हुआ।

इधर पुणे विद्यापीठ के जयकर ग्रन्थालय में संगृहीत अनेक हस्तलिखित ग्रन्थों को देखते-भालते कई ऐसे ग्रन्थ प्राप्त हुए जिनके वैज्ञानिक एवं प्रामाणिक सम्पादन की आवश्यकता जान पड़ी। कई ऐसे ग्रन्थ मिले जिनसे अज्ञात अथवा अल्पज्ञात कृतियों और कवियों के प्रकाश में आने की संभावना बढ़ी। उस दृष्टि से विभागीय प्राध्यापकों, महाविद्यालयीन सहयोगियों तथा शोध छात्रों का ध्यान पाठ-सम्पादन की ओर आकर्षित किया गया और साथ ही उक्त प्रकार की कृतियों और कृती कवियों पर शोधकार्य भी आरंभ कराया गया। यहाँ तक कि पूर्वाभ्यास की नींव डालने की दृष्टि से एम० ए० के पाठ्यक्रम में अनुसन्धान-प्रक्रिया और पाठानुसन्धान विषयक एक सर्वथा स्वतन्त्र प्रश्नपत्र भी रखा गया। १९६६ में विभाग का सूत्र सँभालने के उपरान्त से इस परिवर्तन को लाते और मार्गदर्शन करते-करते हमने स्वयं वृन्द के वंशज दौलत कवि, रीतिकाल के प्रसिद्ध आचार्य एवं कवि सूरति मिश्र तथा हरिचरणदास की ग्रन्थावलियाँ तैयार कीं और उनमें अबतक प्राप्त सारी प्रतियों का उपयोग किया, हमारे सहयोगी डॉ०

कृष्ण दिवाकर ने 'चिन्तामणि ग्रन्थावली' के सम्पादन का कार्य उठाया, शोध छात्रों ने रसिक सुन्दर, समय सुन्दर, राव गुलाबसिंह, गंग कवि आदि कवियों की कृतियों का अनुशीलन किया और डॉ० केणी ने 'एकनाथकृत भावार्थ रामायण और गोस्वामी तुलसीदासकृत रामचरितमानस का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर अपना पी-एच० डी० उपाधि का शोध-प्रबन्ध पूरा कर लेने पर बड़े मनोयोग से इस दिशा में तत्परतापूर्वक रत रह कर दूलह कविकृत 'कविकुलकण्ठाभरण' का पाठ-सम्पादन तथा उसका अनुशीलन किया। उनका वह ग्रन्थ पुणे विद्यापीठ की हिन्दी प्रकाशन समिति की ओर से प्रकाशित हो चुका है। उसी अध्ययन-क्रम में उन्होंने बलभद्र कृत 'सिखनख' ग्रन्थ का सपरिश्रम सम्पादन एवं अनुशीलन किया है।

डॉ० केणी ने सजग शोधकर्ता की भाँति ही इस कार्य में भी समस्त सूत्रों को खोजने-मिलाने का प्रयत्न किया है, और जहाँ तक हो सका, उन्होंने समस्त सामग्री का विवेकपूर्ण उपयोग किया है। डॉ० केणी के इस कार्य की विशेषता यह है कि उन्होंने निर्व्याज भाव से जैसे सामग्री-सञ्चयन में सहायक सूत्रों का उल्लेख किया है, वैसे ही उन्होंने अपने अध्ययन-क्रम में उपस्थित मतभेद को भी साधु-भाव से और निर्भीकतापूर्वक व्यक्त कर दिया है। 'नखशिख' और 'शिखनख' परम्परा के विषय में उनके तर्क ध्यान आकर्षित करते हैं और गंभीर शोध के लिए पाठक को निमन्त्रित करते हैं। इसी प्रकार पाठ-सम्पादन के सम्बन्ध में अपनाये गये रूपों का भी उन्होंने विशद निरूपण कर दिया है जिससे उनकी कार्य-प्रणाली को समझने में तो सहायता मिलती ही है, इस दिशा में औचित्य की परख कर के भावी कार्य के लिए बल भी मिलता है। इन बातों से भी अधिक महत्त्वपूर्ण और उल्लेखनीय यह कि डॉ० केणी ने इस कार्य में सहायक चन्द्रसेन मोहणोत की 'सिखनख' की सबसे पुरानी टीका को मूल ग्रन्थ के साथ सम्पादित करके प्राप्त सामग्री और ज्ञात इतिहास में एक नयी कड़ी जोड़ दी है। इतिहास को उनकी यह नयी देन है। हमारी इच्छा थी कि वे इस ग्रन्थ की अन्य टीकाओं को भी साथ ही जोड़ देते, किन्तु पुस्तक का कलेवर अनपेक्षित रूप से बढ़ जाने की आशंका से वैसा करना उचित न जान पड़ा। यदि पाठकों का आग्रह रहा तो दूसरे संस्करण में अभीष्ट वृद्धि कर दी जायेगी।

हमें विश्वास है कि सहृदय पाठकों की ओर से डॉ० केणी के इस कार्य को अपेक्षित सम्मान प्राप्त होगा और उनसे हमें इस प्रकार के अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के सुसम्पादित संस्करण प्राप्त हो सकेंगे।

पुणे विद्यापीठ, पूना-७
४-१०-७५

डॉ० आनन्दप्रकाश दीक्षित
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, हिन्दी विभाग

सम्मति

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

वाणी-वितान-भवन
१०-६३ ब्रह्मनाल, वाराणसी-१
(उत्तर प्रदेश)

दिनांक ४-११-१९७६

हिन्दी-साहित्य के मध्यकाल में अनेक नखशिख के ग्रंथ निर्मित हुए। नायिका के रूप-वर्णन में संस्कृत साहित्य के आचार्य नखशिख और शिखनख की परिपाटी का उल्लेख कहीं नहीं करते। यह अवश्य है कि हिन्दी-साहित्य के प्रवर्त्तन के पूर्व से साहित्य में बिना किसी प्रकार का संकेत किए अंगों का सौन्दर्य-वर्णन होता था। ऐसा प्रतीत होता है कि अंगों का वर्णन तो होता था, पर उसका कोई क्रम आदि निश्चित नहीं था। यह क्रम कब से निश्चित हुआ, इसका भी इदमित्थम् कथन नहीं किया जा सकता। ऐसा प्रतीत होता है कि फारसी साहित्य के संपर्क के अनंतर ही क्रम-व्यवस्था की गई। फारसी में 'सरापा' नाम से अंगों के सौन्दर्य-वर्णन की परंपरा है। सर से पैर तक वर्णन करने का विधान है। अर्थात् शिखनख की व्यवस्था है। यही कारण है कि हिन्दी के प्रेमाख्यानक काव्य लिखनेवाले कवि शिखनख का ही वर्णन करते हैं, नखशिख का नहीं। हिन्दी में कविप्रिया में केशवदास ने व्यवस्था ही दे दी—

नख तें सिख लौं बरनिये देवी दीपति देखि।
सिख तें नख लौं मानुषी केसवदास बिसेषि॥

देव या दिव्यकोटि में देवों के साथ ही अवतार भी रखे जाते हैं। देव केवल दिव्य होते हैं, अवतार दिव्य+अदिव्य=दिव्यादिव्य। दिव्यता होने से उनके वर्णन में भी नखशिख की अर्थात् नख से आरंभ करके शिख तक वर्णन करने की पद्धति है। हिन्दी में नखशिख शब्द ही क्यों प्रचलित है और उसमें नखशिख ही अधिकतर क्यों लिखे गए, इसी से कि यहाँ नायिका राधिकाजी ही मानी जाती हैं और वे दिव्यादिव्य कोटि में हैं, मानुषी मात्र या अदिव्य मात्र नहीं। केशवदास आचार्य थे, इसलिए उन्होंने नखशिख शिखनख दोनों लिख दिए। बलभद्र मिश्र का शिखनख केशवदास की कविप्रिया के पहले ही निर्मित हो गया था, इसलिए प्राप्त नखशिखों में वह सब-

से प्राचीन ठहरता है। यह पहले मुद्रित हो चुका था, पर उसका जिसे आजकल वैज्ञानिक पाठशोध कहते हैं, अभी तक नहीं हुआ था। डॉ० केणी ने इसी की पूर्ति की है। उन्होंने कई हस्तलिखित ग्रंथों और उस पर की गई टीका का भी उपयोग किया है। इसलिए इसकी प्रामाणिकता निःसंदिग्ध है। सबसे अधिक प्रसन्नता का विषय है कि हिन्दी-क्षेत्र से दूर के विपश्चित इस कार्य में संलग्न हो रहे हैं। यह हिन्दी के मध्यकाल के सुसंपादित ग्रंथों की उपलब्धि की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है और उसके उज्ज्वल भविष्य का सूचक है। श्री केणी ने कवि दूलह के ग्रंथ का भी संपादन विशेष परिश्रमपूर्वक किया है। वे हिन्दी के मध्यकालिक साहित्य में अभिरुचि रखनेवालों के द्वारा साधुवाद के पात्र हैं। आशा है, इसका वांछित रूप में चलन और अभिनंदन होगा।

—विश्वनाथप्रसाद मिश्र

निवेदन

हिन्दी साहित्य के मध्यकालीन इतिहास में कतिपय ऐसे श्रेष्ठ एवं महत्त्वपूर्ण कवियों को गिना जा सकता है जिनको लगभग सभी विद्वानों एवं साहित्य के इतिहासकारों ने फुटकर कवियों की पंक्ति में प्रतिष्ठित करके अद्यावधि अलक्षित रखा है। फलतः इन साहित्यकारों का मूल्यवान् साहित्य दुर्भाग्यवशात् हस्त-लिखित ग्रंथों के रूप में विपुल मात्रा में प्रदेश-प्रदेश में बिखरा पड़ा है, जिसका प्रकाशन हिन्दी साहित्य की अभिवृद्धि के लिए यथाशीघ्र होना नितांत आवश्यक है, अन्यथा कालांतर में इस अनमोल साहित्य-राशि के विलुप्त होने की आशंका है।

ग्रंथकार के समग्र कृतित्व के सम्यक् अध्ययन के बिना उसके विषय में कोई मत-निर्धारण करना अथवा उसे सामान्य कवियों की श्रेणी में बिठाकर छुट्टी पाना वस्तुतः उक्त ग्रंथकार के साथ अन्याय करना है। इस अन्याय का अंशतः परि-मार्जन करने के उद्देश्य से मैंने गत वर्ष आचार्य-कवि दूलह के एकमेव उपलब्ध श्रेष्ठ ग्रंथ 'कविकुलकण्ठाभरण' का टीकासहित सम्पादन करते हुए कवि के व्यक्तितत्व एवं कृतित्व का एक अध्ययन प्रस्तुत किया था, जिसका प्रकाशन पुणे विद्यापीठ के प्रकाशन विभाग द्वारा हाल ही में सम्पन्न हो चुका है। इस अध्ययन के उपरान्त मुझे प्रतीत हुआ था कि यदि दूलह के समग्र कृतित्व का अध्ययन हो जाए तो संभवतः उनकी गिनती श्रेष्ठ आचार्य कवियों में हो सकती है।

पूर्व रीतिकाल के ऐसे ही एक दूसरे महत्त्वपूर्ण किन्तु विद्वानों द्वारा अलक्षित आचार्य-कवि बलभद्र मिश्र के 'सिखनख' ग्रंथ का सम्पादन इस दिशा में मेरा दूसरा प्रयास है। इस ग्रंथ का जितना परिशीलन और चिन्तन-मनन मैं यथामति कर पाया हूँ, उसी की फल-निष्पत्ति के रूप में प्रस्तुत ग्रंथ रसिक पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। निष्कर्ष के रूप में मेरी यह दृढ़ धारणा हो गयी है कि बलभद्र भी श्रेष्ठ आचार्य-कवियों की श्रेणी में स्थानापन्न होने के अधिकारी हैं। दूलह की तरह बलभद्र के कृतित्व से संबंधित अधिक सामग्री की खोज में दत्तचित्त रहकर निकट भविष्य में बलभद्र के समग्र कृतित्व को प्रकाश में लाने का मेरा संकल्प है।

प्रस्तुत ग्रंथ के सम्पादन एवं प्रकाशन-कार्य में जिन-जिन व्यक्तियों से मुझे सहायता प्राप्त हुई है, उनके प्रति आभार व्यक्त करना मेरा कर्तव्य है। सबसे पहले पुणे विद्यापीठ का मैं कृतज्ञ हूँ जिसने प्रस्तुत शोध-कार्य **एवं ग्रंथ-प्रकाशन के लिए आर्थिक अनुदान देने की कृपा की है। मैं विद्यापीठ अनुदान मण्डल का भी कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इस ग्रंथ के लिए मुझे तीन हज़ार रुपये का अनुदान देकर उपकृत किया है।**

पुणे विद्यापीठ के हिन्दी विभागाध्यक्ष श्रद्धेय डॉ० आनन्दप्रकाश दीक्षित की प्रेरणा और प्रोत्साहन से मुझे प्रस्तुत शोध-कार्य के लिए निरंतर स्फूर्ति एवं बल प्राप्त होता रहा। उन्होंने शोध-कार्य में समय-समय पर उपस्थित होने वाली कठिनाइयों में मेरी सहायता करके तथा अपने मूल्यवान् निर्देशन एवं सुझावों से मुझे कृपान्वित करके मेरे कार्यभार को हलका कर दिया है। उन्हीं की असीम कृपा का यह फल है कि प्रस्तुत ग्रंथ यथासंभव अद्यतन रूप में पाठकों की सेवा में प्रस्तुत किया जा सका है। उनके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन उपचारस्वरूप ही होगा, उनसे उऋण होना असंभव है।

पुणे विद्यापीठ के 'जयकर ग्रंथालय' के अधिकारियों से समय-समय पर प्राप्त हस्तलिखित एवं अन्यान्य महत्त्वपूर्ण संदर्भ-ग्रंथ संबंधी सहायता के लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ। 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के मान्यवर सहायक मंत्री श्री शंभूनाथ वाजपेयी का मैं हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने 'सिखनख' की मुद्रित प्रति मेरे लिए प्राप्त करा दी।

विद्वद्वर आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र का मैं विशेष रूप से ऋणी हूँ जिन्होंने अपने मौलिक सुझावों से मुझे लाभान्वित किया है।

उन सभी ग्रंथकारों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना भी मेरा कर्तव्य है जिनकी कृतियों से मैंने अपने शोध-कार्य में साक्षात् या परोक्ष सहायता प्राप्त की है तथा जिनका निर्देश ग्रंथ में यथास्थान कर दिया है।

पुणे | विनीत
रंगपंचमी | **सज्जनराम केणी**
७ मार्च, १९८०

भूमिका

१. पूर्व रीतिकालीन आचार्य-कवि बलभद्र

भारतीय काव्यशास्त्र की विस्तृत परंपरा को संपन्न-समृद्ध बनाने में हिन्दी के कवियों ने, विशेष कर रीतिकालीन आचार्यों ने अत्यंत महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। हिन्दी काव्यशास्त्र का यथेष्ट विकास यद्यपि रीतिकाल में ही हुआ है, तथापि पूर्व रीतिकाल में भी कतिपय ऐसे कवि पाये जाते हैं जिन्होंने रीति-साहित्य की श्रीवृद्धि में हाथ बँटाया है। इनमें बलभद्र कवि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

कालदृष्टया बलभद्र कवि का अंतर्भाव यद्यपि भक्तिकाल में ही करना उचित होगा, तथापि जहाँ तक प्रवृत्ति एवं वर्ण्य विषय का प्रश्न है, उनकी गिनती पूर्व रीतिकाल के रीति-कवियों के अंतर्गत करना ही युक्तियुक्त लगता है। बलभद्र ने काव्य-दोष पर तथा रस-पक्ष के अंतर्गत काव्यशास्त्र के संचारी, ललित एवं स्थायी भाव तथा 'नायिका-भेद' अंग पर विवेचन किया है। अतः वे एक आचार्य-कवि के रूप में हमारे सामने आते हैं और इस दृष्टि से रीति-साहित्य के विकास में उनका योगदान उपेक्षणीय नहीं है।

२. बलभद्र पर शोध-कार्य या अध्ययन

रीतिपूर्व हिन्दी साहित्य के इतिहास में बलभद्र कवि का नाम गौरव के साथ लिया जाना चाहिए। हिन्दी के आचार्य-कवियों में बलभद्र कवि का अपना विशिष्ट स्थान है। किन्तु खेद की बात है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास-कारों ने उनका समावेश फुटकर कवियों में किया है। फलतः बलभद्र से संबंधित खोज-कार्य अथवा सम्यक् अध्ययन का अभाव ही दिखाई देता है। हिन्दी साहित्य के अधिकांश इतिहासकारों ने बलभद्र के संबंध में या तो अति संक्षिप्त कथन किया है या केवल ग्रंथ और ग्रंथकार की सूचना भर दी है। अधिक क्या, अभी तक किसी ने भी बलभद्र के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का सांगो-पांग अध्ययन करने का प्रयत्न नहीं किया है। साहित्य के इतिहासकारों से तो

किसी विस्तृत विवेचन की अपेक्षा नहीं की जा सकती, किन्तु रीतिकालीन साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करनेवालों ने भी अभी तक बलभद्र की काव्य-कला का अंशत: भी विवेचन नहीं किया है। जिन लेखकों ने बलभद्र के संबंध में न्यूनाधिक मात्रा में कुछ कहा भी है, वह केवल सूचनात्मक, परिचयात्मक अथवा विवरणात्मक ही है, समीक्षात्मक या समालोचनात्मक नहीं। वस्तुतः बलभद्र कवि और उनका कृतित्व अनुसंधाताओं के लिए आकर्षक विषय हो सकता है।

३. बलभद्र विषयक जानकारी देनेवाले ग्रंथ

बलभद्र के विषय में जिन ग्रंथों में न्यूनाधिक मात्रा में जानकारी मिलती है, वे इस प्रकार हैं —

(अ) खोज-विवरणात्मक ग्रंथ :

(१) **हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण**—(१ला खंड)—काशी नागरी प्रचारिणी सभा ; (२) **सरोज-सर्वेक्षण**—डॉ० किशोरीलाल गुप्त; (३) **मिश्रबंधु-विनोद** (प्रथम भाग)—मिश्रबंधु।

(ब) साहित्यिक इतिहास-ग्रंथ :

(१) **जॉर्ज ग्रियर्सन कृत हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास**—संपादक डॉ० किशोरीलाल गुप्त; (२) **मिश्रबंधु-विनोद**; (३) **हिन्दी साहित्य का इतिहास**—रामचंद्र शुक्ल; (४) **हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास**—हरिऔध; (५) **हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास**—डॉ० रामकुमार वर्मा; (६) **हिन्दी साहित्य**—डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, डॉ० ब्रजेश्वर वर्मा; (७) **हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास**—डॉ० भगीरथ मिश्र और पं० रामबहोरी शुक्ल; (८) **ब्रज साहित्य का इतिहास**—डॉ० सत्येन्द्र; (९) **हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ**—डॉ० गोविंदराम शर्मा; (१०) **हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास** (षष्ठ भाग)—सं० डॉ० नगेन्द्र; (११) **हिन्दी साहित्य का इतिहास**—रामशंकर शुक्ल 'रसाल'; (१२) **हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास**—डॉ० भगीरथ मिश्र; (१३) **हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ**—प्रो० शिवकुमार शर्मा; (१४) **हिन्दी साहित्य का इतिहास**—डॉ० जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव; हरेन्द्र प्रताप सिन्हा।

(क) काव्य-संग्रह :

(१) **कविता-कौमुदी** (१ला भाग)—सं० रामनरेश त्रिपाठी; (२) **रीति-काव्य-संग्रह**—डॉ० जगदीश गुप्त ।

(ड) आलोचनात्मक ग्रंथ :

(१) **हिन्दी का रीति-साहित्य**—डॉ० भगीरथ मिश्र; (२) **हिन्दी साहित्य का उत्तर मध्ययुग**—राजकिशोर पांडेय; (३) **हिन्दी रीति-परंपरा के प्रमुख आचार्य**—डॉ० सत्यदेव चौधरी; (४) **हिन्दी काव्यशास्त्र में रस-सिद्धांत**—डॉ० सच्चिदानंद चौधरी; (५) **ब्रज साहित्य का नायिका-भेद**—प्रभुदयाल मित्तल; (६) **रीतिकालीन कविता एवं शृंगार-रस का विवेचन**—डॉ० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी; (७) **हिन्दी साहित्य का अतीत**— (शृंगार-काल)—डॉ० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र; (८) **रीति-काव्य में शृंगार-निरूपण**—सुखस्वरूप श्रीवास्तव; (९) **रीतियुगीन काव्य**—डॉ० कृष्णचंद्र वर्मा; (१०) **केशवदास : जीवनी, कला और कृतित्व**—डॉ० किरणचंद शर्मा; (११) **रीतिकालीन कवियों का काव्य-शिल्प**—डॉ० महेन्द्र कुमार ।

(फ) अन्य :

(१) **हिन्दी साहित्य-कोश** (२रा भाग)—ज्ञान मंडल लि०, वाराणसी; (२) **ब्रजभाषा : रीतिशास्त्र-ग्रंथ कोश**—जवाहरलाल चतुर्वेदी ।

४. बलभद्र की संक्षिप्त जीवनी एवं साहित्यिक परिचय

यद्यपि बलभद्र के विषय में विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं होती, फिर भी उनकी जीवनी-विषयक वंश-परिवार, जन्म-तिथि, निवास-स्थान, रचना-काल आदि बातों की जो भी सूचनाएँ प्राप्त होती हैं, वे संदेह से परे हैं और उनमें गुत्थियाँ लगभग नहीं हैं। अन्तःसाक्ष्य के रूप में प्राचीन एवं अधिकांश मध्यकालीन कवियों की जीवनी-विषयक सूचनाएँ प्राप्त ही नहीं होतीं; और जो होती हैं, वे भी अत्यल्प मात्रा में ही । फलतः इन कवियों की प्रामाणिक जीवनी उपलब्ध करना टेढ़ी खीर हो जाती है।

बलभद्र के विषय में तथ्य यह है कि अन्तःसाक्ष्य के रूप में उनके दो-एक ग्रंथ ही उपलब्ध हैं। इनमें कहीं भी कवि के जीवन-वृत्तान्त की आंशिक सूचना तक प्राप्त नहीं होती । अतः इस विषय में बहिस्साक्ष्य का ही सहारा लेना पड़ता है ।

बहिस्साक्ष्य के रूप में सबसे अधिक प्रामाणिक जानकारी केशवदास जी के 'कविप्रिया' ग्रंथ में प्राप्त होती है जिसमें कवि ने अपने विषय में परिचय देते हुए न केवल बलभद्र के अपने बड़े भाई होने की बात कही है, अपितु विस्तृत वंश-परिचय के साथ ही जीवनी-विषयक कई अन्य महत्त्वपूर्ण बातों की ओर भी निर्देश किया है। उनके 'रामचंद्रिका' तथा 'विज्ञानगीता' ग्रंथों में भी जीवनी-विषयक उल्लेख प्राप्त होते हैं। इनमें से बहुत-सी सूचनाएँ समान रूप में बलभद्र के लिए भी असंदिग्धतया स्वीकृत की जा सकती हैं।

नाम—'नखशिख' एवं 'रसविलास' के रचयिता बलभद्र मिश्र रीति-काल के सुविख्यात आचार्य केशवदास जी के बड़े भाई हैं। जैसा कि ऊपर कहा गया है, केशवदास जी ने अपने ग्रंथ—'कविप्रिया' (दूसरा प्रभाव)—में इनका उल्लेख किया है, अतः इस संबंध में संदेह के लिए कोई स्थान ही नहीं रह जाता।[1]

'हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों का संक्षिप्त विवरण' (भाग १) ग्रंथ में 'बलभद्र' नाम से और तीन कवियों का निर्देश पाया जाता है जिनका परिचय इस प्रकार दिया गया है[2]—

---

१. ब्रह्मादिक के विनय ते, प्रकट भये सनकादि।
उपजे तिन के चित्त ते, सब सनाढ्य की आदि ॥१॥
× × ×
पुत्र भये हरिनाथ के, कृष्णदत्त शुभ वेष।
सभा शाह संग्राम की जीती गढ़ी अशेष ॥१३॥
तिनको वृत्ति पुराण की दीन्हीं राजा रुद्र।
तिनके काशीनाथ सुत, सोभे बुद्धि समुद्र ॥१४॥
जिनको मधुकर शाह नृप, बहुत कियो सनमान।
तिनके सुत बलभद्र बुध, प्रकटे बुद्धि निधान ॥१५॥
बालहि ते मधु शाह नृप, तिन सों सुन्यो पुरान।
तिनके सोदर द्वै भये, केशवदास कल्यान ॥१६॥
भाषा बोलि न जानहिं, जिनके कुल के दास।
भाषा कवि भो मंदमति, तेहिं कुल केशवदास ॥१७॥
—'कविप्रिया'—(केशवदास)—२रा प्रभाव, छंद १ से १७।

२. 'हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों का संक्षिप्त विवरण'—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, पृ० ६२८।

१. **बलभद्र**—क्षत्रिय । केशवदास के पुत्र । सं० १६६५ के लगभग वर्तमान । 'वैद्यविद्या विनोद' (पद्य) ।

२. **बलभद्र**—(?) । 'षट् नारी षट् वर्णन' (पद्य) ।

३. **बलभद्र**—जयकृष्ण कवि कृत 'कवित्त' नामक ग्रंथ में इनकी रचनाएँ संगृहीत हैं ।

उपर्युक्त बलभद्र नामधारी तीनों कवि निःसंदेह 'सिखनख' के रचयिता बलभद्र मिश्र से भिन्न हैं । क्योंकि प्रथम बलभद्र तो क्षत्रिय हैं, जब कि बलभद्र मिश्र सनाढ्य ब्राह्मण हैं और केशवदास से इनका रिश्ता पिता-पुत्र का नहीं, अग्रज-अनुज का है । शेष दो का न तो जन्म-संवत् ही दिया गया है, न कोई अन्य जानकारी । अन्य किसी ग्रंथ में भी इनका निर्देश नहीं है, अतः इनका व्यक्तित्व संदिग्ध है ।

वंश-परिचय तथा निवास-स्थान—जैसा कि ऊपर निर्देश किया गया है, केशवदास जी के ग्रंथों में प्राप्त सूचनाओं के अनुसार बलभद्र कवि कृष्णदत्त मिश्र के पौत्र और पं० काशीनाथ मिश्र के पुत्र तथा केशवदास के बड़े भाई थे । कल्याणदास नाम का उनका एक छोटा भाई भी था । इनका कुल सनाढ्य ब्राह्मण का था । शिवसिंह सेंगर ने इन्हें सनाढ्य मिश्र बुंदेलखंडी कहा है । जॉर्ज ग्रियर्सन ने भी इसकी पुष्टि की है । बलभद्र के वंश की वृत्ति पुराणकार की थी । स्वयं बलभद्र मिश्र बालकपन से ही ओरछा के नरेश रुद्रप्रताप के पुत्र मधुकर शाह को पुराण सुनाया करते थे । बलभद्र के वंश में संस्कृत की पांडित्य-परंपरा वर्षों से चली आई थी । उनके पितामह पं० कृष्णदत्त मिश्र संस्कृत के प्रसिद्ध नाटक 'प्रबोध-चन्द्रोदय' के रचयिता थे । उनके पिता पं० काशीनाथ भी संस्कृत भाषा के प्रसिद्ध विद्वान् थे । पैतृक दाय के रूप में यही विद्वत्ता बलभद्र को भी प्राप्त थी । बेतवा नदी के तट पर स्थित ओरछा नगर इस वंश का निवास-स्थान था । 'हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों का संक्षिप्त विवरण' ग्रंथ में न जाने किस आधार पर बलभद्र को वृन्दावनवासी कहा है, जब कि वहुतेरे विद्वानों ने उनको ओरछा राज्यांतर्गत ओरछा नगर का निवासी ही स्वीकार किया है । 'भारत जीवन प्रेस', काशी में मुद्रित बलभद्र कृत 'सिखनख' ग्रंथ के अंत में निम्नांकित उल्लेख है :—"इति श्री ओड़छा नगर निवास द्विज-कुल मुकुट माणिक्य मिश्रोपनामक सुकवि शिरोमणि बलभद्र कविकृत 'सिखनख' संपूर्णम् ।"—इससे भी बलभद्र का 'ओरछा नगर निवासी' होना प्रमाणित हो जाता है ।

जन्म-तिथि एवं अवसान-तिथि—बलभद्र मिश्र के जन्म-संवत् के विषय में

सभी विद्वानों में ऐकमत्य है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इनका जन्म वि० सं० १६०० (१५४३ ई०) के लगभग माना है। अन्य विद्वानों ने इसी तिथि को निर्विवाद रूप में स्वीकार किया है। इनकी अवसान-तिथि के विषय में कहीं कोई निर्देश नहीं मिलता।

आश्रयदाता—ओरछा-नरेश मधुकरशाह बलभद्र के संभवत: एकमेव आश्रयदाता थे जिनको ये बालकपन से ही पुराण की कथाएँ सुनाया करते थे। इनके अन्य आश्रयदाताओं के विषय में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है।

बलभद्र का रचना-काल—बलभद्र की उपलब्ध रचनाओं में कहीं भी कृतित्व-काल का संकेत नहीं पाया जाता। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार इनका रचना-काल १६४० वि० सं० (१५८३ ई०) के पहले माना गया है। इस तिथि का अन्य किसी विद्वान् द्वारा खंडन नहीं किया गया है। किन्तु निश्चित तिथि अज्ञात ही है।

बलभद्र की रचनाएँ—बलभद्र के नाम पर जिन ग्रंथों का उल्लेख मिलता है, वे इस प्रकार हैं :—१. 'गोवर्द्धन सतसई की टीका', २. 'हनुमन्नाटक का अनुवाद', ३. 'बलभद्री व्याकरण', ४. 'दूषण-विचार', ५. 'भागवत भाष्य', ६. 'सिखनख' या 'सिखनख शृंगार' और ७. 'रस-विलास'।

उक्त ग्रंथों में से प्रथम ३ ग्रंथों की सूचना गोपाल कवि के द्वारा प्राप्त हुई। इन्होंने संवत् १८९१ (१८३४ ई०) में बलभद्र कृत 'सिखनख' की टीका 'सिखनख-दर्पण' नाम से लिखी थी जिसमें उक्त ३ ग्रंथों का उल्लेख उन्होंने किया है। किन्तु इन ग्रंथों की प्रामाणिकता संदिग्ध है, ये ग्रंथ उपलब्ध भी नहीं हैं।

आचार्य शुक्ल ने खोज में प्राप्त ग्रंथ के रूप में 'दूषण-विचार' का उल्लेख किया है[1] जिसमें काव्य के दोषों का निरूपण है।

पं० रामनरेश त्रिपाठी ने 'रस-विलास' को छोड़कर पूर्वोक्त सभी ग्रंथों का उल्लेख किया है।[2] 'भागवत-भाष्य' ग्रंथ की सूचना भी उन्हीं के द्वारा प्राप्त होती है जो हरिऔध के अतिरिक्त अन्य किसी विद्वान् द्वारा समर्थित नहीं है। यह ग्रंथ उपलब्ध भी नहीं है, अत: इसकी प्रामाणिकता संदिग्ध प्रतीत होती है। किन्तु बलभद्र संस्कृत भाषा के प्रसिद्ध विद्वान् भी थे। अत: 'भागवत-भाष्य' जैसे ही अन्य ग्रंथों का उनके द्वारा सर्जन भी असंभवनीय नहीं माना जा सकता।

---

१. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'—आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ० २२९-२३०।
२. 'कविता-कौमुदी' (भाग १ला)—पं० रामनरेश त्रिपाठी, पृ० २६७।

बलभद्र की उपलब्ध प्रामाणिक रचनाएँ तीन हैं :—१. 'सिखनख' या 'सिखनख-श्रृंगार', २. 'रस-विलास' और ३. 'दूषण-विचार'। इनका 'सिखनख' ग्रंथ विशेष रूप में प्रसिद्ध रहा है। इसमें कवि ने नायिका के अंग-प्रत्यंगों का आलंकारिक शैली में वर्णन किया है। 'रस-विलास' में रसों का वर्णन अपने ढंग का है। स्वयं बलभद्र ने इसे महाकाव्य के नाम से संबोधित किया है। इसमें रस का स्वतंत्र वर्णन नहीं है, केवल संचारी और स्थायी भावों का ही वर्णन किया गया है, किन्तु इन वर्णनों के अनेक उदाहरण रसपूर्ण हैं। इनके काव्य में भाषा पर इनका अधिकार और पांडित्य प्रत्यक्ष रूप में झलकता है। 'दूषण-विचार' में काव्य के दोषों की चर्चा की गई है।

५. नख-शिख परंपरा का मूल स्रोत

श्रृंगार-साहित्य की जो विविध रीति-प्रवृत्तियाँ हैं, उनमें नायिका-भेद एवं नख-शिख-वर्णन सबसे अधिक उल्लेखनीय हैं। वस्तुतः नख-शिख-वर्णन नायिका-भेद का ही एक अंग है। श्रृंगार-साहित्य में नायिका-भेद एक परिपाटी के रूप में स्वीकार लिया गया था, अतः नायिकाओं का नख-शिख-वर्णन भी परिपाटी के रूप में ही अपनाया गया। रीति-कवियों ने नायिकाओं के केश, नासिका, कर्ण, नेत्र, ओष्ठ, कपोल, ठोड़ी, कर, कुच, नितंब आदि अंग-प्रत्यंगों का सरस एवं आलंकारिक वर्णन बड़ी कुशलता के साथ किया है। कई कवियों ने तो एक-एक अंग के वर्णन पर स्वतंत्र ग्रंथ ही रच डाले हैं। मुबारक अली के 'अलकशतक' और 'तिलशतक' ग्रंथ इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

नायिका-भेद एवं नख-शिख-वर्णन की परंपरा बड़ी प्राचीन है। नायिका-भेद के उद्गम-स्थान एवं परंपरा के विषय में विद्वानों में उल्लेखनीय मतभेद नहीं है। प्रायः सभी विद्वान् इस बात से सहमत हैं कि भारतीय साहित्य में नायिका-भेद की परंपरा काव्यशास्त्र की परंपरा के साथ ही आरंभ होती है, इसलिए इस विषय का सर्वप्रथम वर्णन महामुनि भरत के 'नाट्यशास्त्र' के २२वें अध्याय में मिलता है, फलतः वही ग्रंथ नायिका-भेद का उद्गम-स्थान या मूल स्रोत है, यद्यपि भरत मुनि ने नायिकाओं के वर्णन में वही क्रम नहीं अपनाया जो इस विषय के रीतिकालीन आचार्यों ने अपनाया है। नाट्यशास्त्र में नायिका-वर्णन अभिनय के संदर्भ में आ गया है, फिर भी वहाँ वर्णित नायिकाओं के अंतर्गत वर्तमान नायिका-भेद की लगभग सभी नायिकाएँ आ जाती हैं।[१]

---

१. 'ब्रजभाषा साहित्य का नायिका-भेद'—प्रभुदयाल मित्तल, पृ० ८५।

किन्तु नाट्यशास्त्रकार भरत से भी पूर्व वात्स्यायन के 'कामसूत्र' में देश, स्वभाव और रति-आनंद के आधार पर नायिकाओं का वर्णन मिलता है। स्यात् वात्स्यायन का यह प्रभाव नाट्यशास्त्रकार पर पड़ा होगा। संभवतः कामसूत्रकार से भी पूर्व नायिका-भेद वर्णन की परंपरा भारतीय साहित्य में प्रचलित रही होगी, क्योंकि 'कामसूत्रकार' ने काम विषय पर अपने पूर्ववर्ती लेखकों का नामोल्लेख किया है।[१] किन्तु भरत के 'नाट्यशास्त्र' के पूर्ववर्ती ऐसे किसी ग्रंथ की उपलब्धि अब तक नहीं हुई है, अतः 'नाट्यशास्त्र' को ही नायिका-भेद का आदिम उद्‌गम-ग्रंथ मानना समीचीन लगता है।

जैसा कि ऊपर कहा गया है, भरत मुनि ने अभिनय के विचार से नायिका-भेद का विवेचन किया था। बाद में चरित्र-चित्रण को निर्दोष एवं परिपूर्ण बनाने के विचार से काव्य का यह उपांग साहित्य में भी स्वीकार किया गया। डॉ० राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी जी ने साहित्य में नायिका-भेद की प्रतिष्ठा के विषय में और एक उद्देश्य पर बड़े मार्मिक शब्दों में प्रकाश डाला है। वे लिखते हैं—"....बाद में जब रस की प्रतिष्ठा हो गई और शृंगार रस को राजत्व प्राप्त हो गया, तब शृङ्गार के आलंबन नायक-नायिकाओं को भी विशेष महत्व दिया जाने लगा और यह विषय साहित्य-शास्त्रियों की चर्चा का विषय बन गया। नायिका-भेद की परिपाटी का प्रारंभिक ग्रंथ रुद्रभट्ट का 'शृङ्गारतिलक' ही माना जाता है।...इन आचार्यों का संबंध काव्यशास्त्र की अपेक्षा कामशास्त्र से ही अधिक था। रुद्रभट्ट के शब्दों में इनका मूल उद्देश्य उदीयमान कवियों को शृङ्गार के छंद रचने की शिक्षा देना और उससे भी अधिक साधारण रसिकों का मनोरंजन एवं ज्ञानवर्धन करते हुए गोष्ठी की शोभा बढ़ाना था।—'किं गोष्ठीमण्डनं शृङ्गारतिलकं बिना'।"[२]

'नाट्यशास्त्र' के पश्चात् व्यास कृत 'अग्निपुराण' में प्रसंगोपान्त नायिका-भेद का कुछ-कुछ वर्णन आ गया है। तत्पश्चात् कुछ काल के लिए परंपरा खंडित-सी होती है और १०वीं शती के बाद फिर से उसके दर्शन रुद्रट, धनंजय, भोज, मम्मट, रुय्यक, भानुदत्त, वाग्भट्ट-द्वितीय, विश्वनाथ, केशव मिश्र इत्यादि संस्कृत के आचार्यों के ग्रंथों में होने लगते हैं। इनके ग्रंथों में धनंजय का 'दशरूपक', विश्वनाथ का 'साहित्यदर्पण' और भानुदत्त-कृत 'रसमंजरी'

---

१. 'हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ'—शिवकुमार शर्मा, पृ० ३४७।

२. 'रीतिकालीन कविता एवं शृंगार-रस का विवेचन'—डॉ० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, पृ० १४०-१४४।

प्रमुख हैं जिनमें नायिका-भेद पर विशेष रूप से चर्चा की गयी है। महाकवि हरिऔध की मान्यता के अनुसार 'साहित्यदर्पण' में नायिका-भेद का पूर्ण विकास देखा जाता है। आजकल जिस प्रणाली से नायिका-विभेद लिया जाता जाता है, उसके आदि प्रवर्त्तक 'साहित्यदर्पणकार' ही हैं। 'रसमंजरी' में 'साहित्यदर्पण' की ही छाया दृष्टिगत होती है।[1]

कहना ज़रूरी नहीं है कि हिन्दी के कवियों की नायिका-भेद की परंपरा का मूल स्रोत पूर्वोक्त संस्कृत साहित्य ही है जहाँ से उन्होंने इस विषय की मूल सामग्री बटोर ली है। वस्तुतः संस्कृत काव्यशास्त्र, कामशास्त्र तथा प्राकृत और संस्कृत शृङ्गारिक काव्य, न केवल नायिका-भेद की, बल्कि रीति-साहित्य के समस्त शृङ्गार-काव्य की आधार-भूमि रहा है जिसका नायिका-भेद एक अंग मात्र है।

नख-शिख-वर्णन नायिका-भेद का ही एक उपांग होने पर भी इसके मूल स्रोत के विषय में विद्वानों में मतभिन्नता पायी जाती है। अधिकांश विद्वान् इसे प्रत्यक्षतः संस्कृत ग्रंथों से गृहीत मानते हैं, तो कुछ अपभ्रंश से और डॉ० विश्वनाथप्रसाद मिश्र जैसे एकाध विद्वान् उसे फ़ारसी और उर्दू से लिया हुआ बताते हैं। संबंधित अपभ्रंश साहित्य को संस्कृत के काव्यशास्त्र एवं हिन्दी के रीति-साहित्य के बीच की कड़ी माना जा सकता है। वर्ण्य विषय, शैली, प्रवृत्ति, छन्द, काव्यरूढ़ियाँ आदि काव्य-सामग्री प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य से ही हिन्दी में ग्रहण की गई, अतः हिन्दी साहित्य कई दृष्टियों से अपभ्रंश का ऋणी रहा है। किन्तु फिर भी नख-शिख की परंपरा का मूल स्रोत अपभ्रंश साहित्य को नहीं माना जा सकता, हाँ इस विषय में अपभ्रंश साहित्य का प्रभाव न्यूनाधिक मात्रा में हिन्दी साहित्य पर अवश्य स्वीकार किया जा सकता है।

पहले कहा गया है कि हिन्दी के रीति-ग्रंथों का प्रत्यक्ष संबंध संस्कृत काव्यशास्त्र से ही है। तथापि, जैसा कि डॉ० सच्चिदानन्द चौधरी का कहना है— "काव्यशास्त्र की एक क्षीण धारा जो अपभ्रंश से आई, उसका प्रभाव भी हिन्दी काव्यशास्त्र पर माना जा सकता है। वह भी केवल इस अर्थ में कि अपभ्रंश के काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में अपभ्रंश के माध्यम से लक्षणों और उदाहरणों की अभिव्यक्ति देखकर जनसामान्य में एक जागृति और प्रेरणा आई। परिणामतः बोलचाल की भाषा (ब्रजभाषा) में भी काव्यशास्त्रीय लक्षण, उदाहरण

---

१. 'रसकलस'—हरिऔध, पृ० १११।

आदि रचे जाने लगे। इस प्रसंग में अपभ्रंश में रचित कतिपय काव्यशास्त्रीय ग्रंथों का नाम लिया जा सकता है। —सिद्धशांति या रत्नाकर शांति का 'छन्दो-रत्नाकर' (सन् १००० ई०), हेमचन्द सूरि का 'प्राकृत व्याकरण', 'छन्दोशास्त्र', 'देशी नाममाला' (१०८८ ई० से ११७९ ई०), जैनाचार्य नयनंद (१०वीं वि० शती) द्वारा लिखित 'सुदर्शनचरित्र' नामक काव्यशास्त्रीय ग्रंथ भी इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। इनमें धार्मिक विषयों के उल्लेख के अलावा ऋतु, नख-शिख, शृङ्गार और नायिका-भेद आदि भी वर्णित पाये जाते हैं।"[१] डॉ० भगीरथ मिश्र ने भी इस मत का समर्थन किया है।[२]

डॉ० रामकुमार वर्मा का कहना है कि "हिन्दी कविता में रीतिकाल की परंपरा जयदेव के 'गीतगोविंद' से होकर विद्यापति की कविता में आयी थी। विद्यापति की पदावली में नायिका-भेद, नख-शिख, ऋतु-वर्णन, दूती-शिक्षा, अभिसार आदि बड़े आकर्षक ढंग से वर्णित हैं। कृष्ण-काव्य की यह धारा वास्तव में रीतिशास्त्र से पूर्ण है।"[३] डॉ० वर्मा के इस मत का बहुसंख्यक विद्वानों ने समर्थन ही किया है और उससे मतभेद प्रकट करने के लिए कोई गुंजाइश भी नहीं है। किन्तु फिर भी जयदेव के 'गीतगोविंद' को हिन्दी की नख-शिख परंपरा का मूल स्रोत नहीं कहा जा सकता, भले ही हिन्दी के रीतिकवि इस ग्रंथ से पर्याप्त मात्रा में प्रभावित रहे हों।

डॉ० विश्वनाथप्रसाद मिश्र के साथ प्रस्तुत लेखक ने पत्राचार से संपर्क स्थापित करके इस विषय में उनसे परामर्श माँगा था। मिश्र जी ने एक पत्र में अपना अभिमत इन शब्दों में प्रकट किया है—"नख-शिख की परम्परा हिन्दी में फ़ारसी की देखादेखी चली है, ऐसा मेरा अनुमान है। अंगों का वर्णन यहाँ भी होता था, पर उसकी व्यवस्था नख-शिख के रूप में नहीं थी। हिन्दी में केशवदास ने उसकी व्यवस्था का निरूपण किया है। कुछ लोग संस्कृत में इसकी परम्परा खोजते हैं, पर वहाँ भी बहुत बाद में, फ़ारसी की परम्परा यहाँ चल पड़ने पर, इसके दर्शन होते हैं। पर वहाँ केवल 'सरापा' था, अर्थात् शिख-नख था। देव-विषयक वर्णन से या अवतार के वर्णन से शिख-नख ने

---

१. 'हिन्दी काव्यशास्त्र में रस-सिद्धान्त'—डॉ० सच्चिदानन्द चौधरी, पृ० २२०-२२१।

२. 'हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास'—डॉ० भगीरथ मिश्र, पृ० ४८-४९।

३. 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास'—डॉ० रामकुमार वर्मा, पृ० ८८।

नख-शिख रूप धारण किया। जायसी आदि सूफ़ियों में इसी से शिख-नख ही मिलता है।" अयोध्यासिंह उपाध्याय ने इस मत से अपनी असहमति प्रकट करते हुए बहुत ही पहले लिख रखा है—"नख-शिख-वर्णन परम्परा द्वारा ही ब्रजभाषा में गृहीत हुआ है। तर्क करने वालों का यह कथन है कि उसने फ़ारसी और उर्दू से यह प्रणाली ग्रहण की है, किन्तु यह सत्य नहीं है। कवि-कुल-गुरु कालिदास ने 'कुमारसम्भव' के ७वें सर्ग में हिमाचल-नंदिनी के अनेक अंगों का बड़ा सुंदर वर्णन किया है। विवाह-काल में सखियों ने उनको जैसे सुसज्जित किया, उसका वर्णन बड़ा ही मनोमोहक है। इसके अतिरिक्त अंगों के उपमानों की कल्पना ब्रजभाषा के कवियों की नहीं है, वे वे ही उपमान हैं जो संस्कृत के आचार्यों द्वारा वर्णित हैं। 'कविप्रिया' में कविवर केशवदास ने इस विषय का बड़ा विशद वर्णन किया है। वे यह भी लिखते हैं—

"नख ते सिख लौं बरनिये, देवी दीपति देखि।
सिख ते नख लौं मानुखी, केसवदास बिसेखि॥"

इस नियम का उल्लेख उन्होंने प्राचीन आचार्यों के मन्तव्य के अनुसार ही किया है; इससे पाया जाता है कि नख-शिख-वर्णन प्रणाली परंपरागत है। हाँ, यह अवश्य है कि ब्रजभाषा में उसका विस्तृत रूप देखने में आता है।"[१]

डॉ० विश्वनाथप्रसाद मिश्र के पूर्वोक्त मत से प्रस्तुत पंक्तियों का लेखक भी सहमत नहीं है। मिश्र जी का यह तर्क सही नहीं प्रतीत होता कि हिन्दी में नख-शिख की परंपरा फ़ारसी की देखादेखी चली है, बल्कि यह परंपरा पूर्णतया भारतीय है तथा उसका आरंभ जयदेव कवि से नहीं होता, जैसा कि कई विद्वान् मानते हैं, बल्कि जयदेव से भी पूर्व काल में भारत में यह परंपरा प्रचलित थी। मिश्र जी का यह तर्क भी मान्य नहीं हो सकता कि अङ्गों के वर्णन की व्यवस्था यहाँ नख-शिख के रूप में नहीं, मात्र शिख-नख के रूप में रही थी। पुष्ट प्रमाणों के साथ स्थापित किया जा सकता है कि भारत में नख-शिख और शिख-नख दोनों के वर्णनों की व्यवस्था बहुत पहले ही से चली आ रही थी, किन्तु उसका संबंध केवल दिव्य या अमानवीय व्यक्तित्व से था।

इस विषय में श्री शिवकुमार शर्मा ने पूर्वोक्त विद्वानों के मतों से भिन्न मत की स्थापना की है। वे लिखते हैं—"...संस्कृत साहित्य में शृङ्गार के इन मुक्तकों के साथ-साथ भक्तिपरक मुक्तकों की एक परंपरा चल पड़ी थी।

---

१. 'रसकलस'—हरिऔध, पृ० १४०।

'चंडीशतक', 'वक्रोक्ति पंचाशिका' और कृष्ण-जीवन से संबद्ध अनेक स्तोत्र-ग्रंथ हैं, जैसे 'कृष्णलीलामृत' आदि। निःसंदेह इन स्तोत्र-ग्रंथों की आत्मा में भक्ति निहित है, परन्तु बाह्य रूप में श्रृङ्गार की प्रधानता है। इनमें शिव-पार्वती और राधा-कृष्ण की लीलाओं का श्रृङ्गारपरक वर्णन है जो किसी भी श्रृङ्गारी काव्य को पीछे छोड़ सकता है। १२वीं से १४वीं शती तक बंगाल और बिहार में राधा-कृष्ण की भक्ति के जो छंद रचे गये, वे काम के सूक्ष्म रहस्यों से ओत-प्रोत हैं, विद्यापति के पद्य इन्हीं के तो हिन्दी के संस्करण हैं और फिर रूप गोस्वामी की 'उज्ज्वल नीलमणि' ने एक विराट् द्वार ही खोल दिया था। संस्कृत के इन श्रृङ्गारपरक भक्ति-स्तोत्रों ने रीतिकालीन श्रृङ्गार को असंदिग्ध रूप में प्रभावित किया। साथ-साथ ये ग्रन्थ रीतिकालीन हिन्दी कवि के राधा-सुमिरन के बहाने के लिए उत्तरदायी हैं।"[1]

श्री शिवकुमार शर्मा ने वास्तव में बड़ी तथ्यपूर्ण बात कही है। उन्होंने संस्कृत के श्रृङ्गारपरक भक्ति-स्तोत्रों से रीतिकालीन श्रृङ्गार को प्रभावित माना है तथा इस मत से विरोध रखने का कोई कारण नहीं दिखाई देता। किन्तु केवल उक्त श्रृङ्गारपरक भक्ति-स्तोत्रों को हिन्दी की नख-शिख परंपरा का एकमेव स्रोत या आधार नहीं माना जा सकता। संस्कृत के ग्रन्थों की भक्ति-स्तोत्र परंपरा में ही कई स्तोत्र हैं जो श्रृङ्गारपरक नहीं, बल्कि पूर्णतः विशुद्ध भक्तिपरक भक्ति-स्तोत्र होते हुए भी उनमें नख-शिख और शिख-नख दोनों प्रकार के वर्णन पाये जाते हैं। जैसा कि ऊपर कहा गया है, ये दोनों वर्णन दिव्य या अमानवीय विभूतियों से ही संबद्ध हैं, पार्थिव नायक-नायिकाओं से नहीं। उदाहरण के लिए श्रीमच्छंकराचार्य-कृत विष्णुपादादि के शान्त, विष्णु-केशादि पादान्त, शिवपादादि के शान्त, शिवकेशादि पादान्त, श्रीभगवद्-ध्यानम् आदि स्तोत्र इस दृष्टि से विचारणीय हैं। इनमें शिव, विष्णु आदि देवताओं का नख से शिख और शिख से नख तक के अङ्ग-प्रत्यंगों का ध्यान-धारणा के हेतु बड़ा ही सुन्दर एवं मनोहारी वर्णन किया दिखाई देता है।

इन स्तोत्रों के मूल में निहित तार्किकता भगवद्भक्तों के अनुसार इस प्रकार है—

"श्री भगवान् के स्वरूप के साथ मन की तद्रूपता कैसे स्थापित की जाए? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए ही मानो आचार्यों ने इन स्तोत्रों की योजना की है। चूंकि भगवान् के समग्र स्वरूप का आकलन मानव-मन के लिए संभव

१. 'हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ'—शिवकुमार शर्मा, पृ० ३४९-३५०।

नहीं है, परमेश्वर के एक-एक अङ्ग में अपने मन को केन्द्रित करते हुए नख से शिख तक तथा शिख से नख तक भगवान् के विराट् स्वरूप में मन की धारणा करते-करते अन्त में भगवत्-स्वरूप में लीन दशा को भक्त पहुँच सकता है।"

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि नख-शिख एवं शिख-नख दोनों कल्पनाएँ पूर्णतया भारतीय हैं तथा दोनों की परंपरा अपने यहाँ बहुत प्राचीन काल से लेकर चली आई है। यहाँ एक बात का स्पष्टीकरण करना आवश्यक हो जाता है। इसके पहले कहा गया है कि नख-शिख वर्णन नायिका-भेद का ही एक उपांग है तथा रीतिकवियों ने नख-शिख परिपाटी को बड़े मनोयोग के साथ अपनाया है। किन्तु केशवदास जैसे एकाध कवि को अपवादस्वरूप छोड़ दिया जाए तो रीतिकवियों का किया हुआ यह वर्णन नख-शिख वर्णन नहीं, बल्कि शिख-नख वर्णन है। दोनों वर्णनों में केवल अङ्गों के क्रम का ही अन्तर नहीं है, जैसी कि प्रथम दृष्टि में धारणा हो सकती है। वस्तुतः शिख-नख तथा नख-शिख शब्दों में बहुत कुछ समानता होने पर भी दोनों को हिन्दी में पारिभाषिक संकेत प्राप्त हो गये हैं, अतः उनके अर्थ में भिन्नता आ गयी है। नख-शिख का सम्बन्ध दैवी या अवतारी व्यक्तित्व से और शिख-नख का पार्थिव या मानवीय व्यक्तित्व से माना जाता है। 'साहित्य का पारिभाषिक शब्दकोश' ग्रंथ में 'नखशिख' शब्द का स्पष्टीकरण इस प्रकार दिया गया है—'पूरी देह का वर्णन। यह दैव पात्रों का चरण की ओर से और मानवी पात्रों में सिर की ओर से आरंभ किया जाता है।'[1] इस सम्बन्ध में आचार्य केशवदास की 'कविप्रिया' की पूर्वोक्त निम्नांकित काव्यपंक्तियाँ भी द्रष्टव्य हैं—

> **"नख ते सिख लौं बरनिये, देवी दीपति देखि।**
> **सिख ते नख लौं मानुखी, केसवदास बिसेखि॥"**

परन्तु यह स्पष्टीकरण सही नहीं है। नखशिख-शिखनख का यह विभेद पूर्वोक्त स्तोत्र ग्रंथों में नहीं माना गया है। वहाँ दोनों प्रकार के वर्णनों का प्रयोग दैवी व्यक्तित्व के साथ ही समान रूप में किया गया है।

उपर्युक्त विवेचन का तात्पर्य यह है कि हिन्दी की नख-शिख परंपरा का मूल स्रोत ये विभिन्न भक्ति-स्तोत्र ही हैं। जो परिपाटी भगवान् के नखशिख और शिखनख के वर्णन के लिए प्रचलित थी, कालांतर में वही नायक-नायिका के लिए उसी प्रकार अपनायी गयी, जिस प्रकार भक्तिकाल के आलंबन

---

१. 'साहित्य का पारिभाषिक शब्दकोश'—राजेन्द्र द्विवेदी, पृ० १२२।

राधा-कृष्ण का रूपांतर राधा-कृष्ण नामों का आवरण सुरक्षित रखकर भी सामान्य नायक-नायिका में किया गया। वस्तुतः हिन्दी साहित्य में भी देवताओं से संबद्ध नख-शिख वर्णनों की कमी नहीं है। लगता है कि उक्त संस्कृत के स्तोत्रों के वर्णनों की देखादेखी हिन्दी कवियों ने भी नखशिख लिखे। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

केशवदास—'नखशिख' (इसमें राधा-कृष्ण के नखशिख का वर्णन है; लौकिक नायिका का वर्णन उन्होंने 'शिखनख' नामक अलग रचना में किया है।)।

ग्वाल कवि—'कृष्ण जू को नखशिख'।

प्रताप साहि—'जुगल नखशिख' (सीताराम का नखशिख-वर्णन)।

गोकुलनाथ—'राधा नखशिख'।

खुमान—'हनुमान नखशिख'।

गिरिधरदास—'लक्ष्मी नखशिख'।

कालांतर में राधा-कृष्ण विषयक माधुर्य-भावना की भक्ति से प्रेरणा प्राप्त करते हुए रीतिकालीन कवियों ने 'राधा-कन्हाई-सुमिरन' के बहाने नग्न शृङ्गार की कविता रचकर नख-शिख वर्णन की अखंड सरिता प्रवाहित करके अपनी और अपने आश्रयदाताओं की शृङ्गारी मनोवृत्ति को तृप्त करने का प्रयत्न किया। इस सम्बन्ध में डॉ० राजेश्वरप्रसाद चतुर्वेदी का निम्नांकित वक्तव्य लक्षणीय है—

"समय के फेर से काली-मर्दन एवं कंस-निकंदन कृष्ण कालांतर में वंशी के बजैया तथा थैया-थैया के नचैया कन्हैया ही रह गये, और रावण को युद्ध-स्थल में ललकारने वाले हिंडोलों में झूलने वाले विलासी अयोध्या-नरेश के रूप में दिखाई देने लगे। भक्ति-साहित्य विकृत होकर शृङ्गार-साहित्य रह गया।"[१]

६. हिन्दी की नख-शिख परंपरा

संस्कृत के भक्ति-स्तोत्रों से दिशा ग्रहण कर तथा जयदेव के 'गीतगोविन्द' से प्रेरित विद्यापति से परोक्ष दीक्षा प्राप्त करके हिन्दी के कवियों ने 'नखशिख' (या 'शिखनख') वर्णन का श्रीगणेश काव्यशास्त्रीय ग्रंथों की रचना के संकल्प के साथ ही किया। अत्यल्प काल में ही नखशिख की जो एक विस्तृत परंपरा उन्होंने निर्माण की, उसे देखकर आश्चर्यान्वित होना पड़ता है। वैसे रासो ग्रंथों

---

१. 'रीतिकालीन कविता एवं शृङ्गार रस का विवेचन'—डॉ० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, पृ० १६९।

में शृङ्गारी चित्रण उपलब्ध होते हैं, पर शृङ्गार का उन्मुक्त एवं स्वच्छंद प्रवाह विद्यापति की पदावली में ही दृष्टिगोचर होता है। सौंदर्य एवं प्रेम के विलास-पूर्ण चित्रों के साथ ही साथ कविश्रेष्ठ ने नख-शिख, वय:सन्धि आदि शृङ्गार के अङ्गोपांगों के दर्शन पाठकों को कराये हैं जिनमें उनकी प्रखर प्रतिभा, सूक्ष्म निरीक्षण-शक्ति तथा रसिकता का सम्यक् परिचय प्राप्त होता है। विद्यापति ही हिन्दी की नख-शिख परम्परा के प्रवर्त्तक के रूप में हमारे सामने आते हैं, यद्यपि हिन्दी के प्राचीनतम ग्रन्थ 'पृथ्वीराज रासो' में भी 'मानहु कला ससि-भान कला सोलह सो बन्निय' आदि वाक्यों में हमें इस विषय की कुछ-कुछ झलक प्राप्त होती है।

आगे चलकर भक्तिकाल में सूर, मीरा, नंद, तुलसी इत्यादि अनेक भक्त-कवियों के काव्य में, अतिशय शृङ्गारिकता भक्ति के आवरण में अभिव्यक्त हो गयी है। सूरदास जी के कई पद ऐसे हैं कि जिनमें रीतिकवियों को भी मात करने वाले नग्न शृङ्गार का चित्रण मिलता है। सूफ़ी काव्यधारा के प्रवर्त्तक जायसी भी इसके लिए अपवाद नहीं। उनके 'पद्मावत' में हमें अङ्ग-प्रत्यंग का वर्णन नख-शिख के ढंग पर मिलता है।

कहना जरूरी नहीं है कि रीतिकालीन कवियों के कर-कमलों में पहुँचकर 'नखशिख' पल्लवित-पुष्पित ही नहीं हुआ, बल्कि चरम विकास को पहुँचकर शृङ्गार के अन्तर्गत वह एक स्वतन्त्र वर्णन का विषय बन गया। भक्तिकाल में शृङ्गार-वर्णन मर्यादित रहा, जिसका संकेत गोस्वामी तुलसीदास के 'राम-चरितमानस' की इस पंक्ति से मिलता है—

'जगत मातु पितु संभु भवानी। तेहि सिंगार न कहउँ बखानी॥'[1]

किन्तु रीतिकाल में इस मर्यादा का उल्लंघन ही नहीं, अतिक्रम भी हुआ और रीतिकालीन कई कवियों ने राधा-कृष्ण के नाम के आवरण में अत्यंत कुरुचि-पूर्ण अश्लील शृङ्गार के वर्णन तक प्रस्तुत किये। रीतिकालीन कवियों ने अत्यल्प काल में नखशिख की एक प्रदीर्घ एवं विस्तृत परम्परा निर्माण की। खोज में प्राप्त 'नखशिख' पर रचित ग्रन्थों की संख्या २५० के करीब है। इस परम्परा का संक्षिप्त विवरण आगे दिया गया है—

---

१. 'रामचरितमानस'—बालकांड, १०२-३।

२. विस्तृत विवरण के लिए देखिए—'ब्रजभाषा : रीति-शास्त्र ग्रंथ कोश'—संपादक जवाहरलाल चतुर्वेदी।

१. गंग—(१५३८–१६२५)—'नखशिख'।

२. ध्रुवदास—(१६२४–७८)—'सिंगारसत' के अन्तर्गत अङ्गों का वर्णन।

३. केशवदास—(सं० १६२४ से १६६९)—'नखशिख'; 'शिखनख'।

४. बलभद्र मिश्र—(वि० सं० १६४२)—'सिखनख'।

५. मुबारक अली—(सं० १६६०)—'अलकशतक' एवं 'तिलशतक'।

६. लीलाधर—(१६७६ वि० सं०)—'नखशिख'।

७. बिहारी—(सं० १६५२ से १७२०)—'सतसई' के अन्तर्गत अङ्गों का वर्णन।

८. पजनेस—(?) 'नखशिख'।

९. सेनापति—(सं० १७०६)—'कवित्त रत्नाकर'; इसकी दूसरी तरङ्ग में श्रृंगार-वर्णन के अन्तर्गत नख-शिख वर्णन भी है।

१०. सुखदेव मिश्र—(वि० सं० १७२० से १७६०)—'नखशिख'।

११. कुलपति मिश्र—(१७२७ वि०)—'नखशिख'।

१२. कालिदास त्रिवेदी—(वि० सं० १७४९ के आसपास)—'नखशिख'।

१३. मान—(सं० १७३४ के आसपास)—'नखशिख'।

१४. सूरत मिश्र—(सं० १७६६ से सं० १७९४ वि०)—'नखशिख'।

१५. नागरीदास—(सं० १७५६ से सं० १८१४ के आसपास)—'शिखनख' और 'नखशिख' वर्णन भी है।

१६ देव—(वि० सं १७८३)—'नखशिख'।

१७. सीतल—(?)–'गुलजारे-चमन'। इसी के अंतर्गत नखशिख-वर्णन है।

१८. खुमान—(१७८० से १८०० वि० सं०)—'हनुमान नखशिख'।

१९. तोष—(सं० १७९४ के आसपास)–'नखशिख'।

२०. रसलीन—(सं०१७९४ वि०)–दोहा छंद में नखशिख-वर्णन। १७७ दोहे।

२१. प्रेमसखी—(सं० १७९१ से १८८०)–'श्रीराम तथा सीताजी का शिखनख' (कवित्त और सवैये)।

२२. गोकुलनाथ, गोपीनाथ, मणिदेव—(सं० १८४० से १८७०)—'राधाजी का नखशिख'।

२३. प्रताप साहि—(१८८० वि० से १९००)—'जुगल नखशिख'।

२४. भिखारीदास—(सं० १८०८ वि०)—'श्रृङ्गारनिर्णय'। इसमें नायिका के सौन्दर्य-वर्णन के प्रसंग में नखशिख-वर्णन मिलता है।

२५. चन्द्रशेखर वाजपेयी—(सं० १८४०-१९१९ वि० के बीच)—'नखशिख'।

२६. ग्वाल—(सं० १८७९ से १९१८)—'कृष्णचंद्रजू की नखशिख'।

२७. लछिराम—(सं० १८९८ से सं० १९९७ वि०)—'महेश्वरविलास'। (नवरस और नायिका-भेद के इस ग्रन्थ में नखशिख-वर्णन भी आ गया है।)

७. बलभद्र का 'सिखनख' : ग्रंथ-परिचय

ग्रंथ का स्वरूप—बलभद्र के कृतित्व का परिचय देते हुए उनके जिस काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ का विद्वानों ने निरपवाद रूप में 'नखशिख' नाम से एक-मुख से उल्लेख किया है, उसका वास्तविक नाम 'नखशिख' नहीं, बल्कि 'सिख-नख' होना चाहिए और वस्तुतः वह वैसा ही है भी। बलभद्र के इस ग्रन्थ की जितनी मुद्रित या हस्तलिखित प्रतियाँ (सटीक या टीकारहित) उपलब्ध हैं, उनमें विवेच्य ग्रन्थ को सर्वत्र 'सिखनख' से ही सम्बोधित किया गया है जो सर्वथैव समीचीन है। प्रस्तुत ग्रन्थ की पुणें विद्यापीठ में प्राप्त हस्तलिखित टीका (टीका-लेखक—चन्द्रसेन मोहणोत) तथा काशी के भारत जीवन प्रेस में मुद्रित ग्रन्थ का नाम 'सिखनख' ही दिया गया है। गोपाललाल या गोपाल कवि कृत इस ग्रन्थ की सुप्रसिद्ध टीका का नाम भी 'सिखनख दर्पण' है। अतः बलभद्र की इस कृति के वास्तविक 'सिखनख' नाम के विषय में अब भ्रम के लिए कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिए।

यहाँ यह तर्क उपस्थित किया जा सकता है कि 'सिखनख' के बदले 'नख-सिख' कहने से अर्थ की दृष्टि से कोई अन्तर नहीं पड़ता, किन्तु बात वैसी नहीं है। चूँकि दोनों भिन्न-भिन्न पारिभाषिक शब्द हैं, उनमें आर्थिक अन्तर भी है। जैसा कि पहले विवेचन किया गया है, 'नखसिख' शृङ्गार का वर्णन अलौकिक व्यक्तित्व से सम्बद्ध माना जाता है, जब कि 'सिखनख' शृङ्गार लौकिक व्यक्तित्व से सम्बन्ध रखता है। बलभद्र के ग्रन्थ का वर्ण्य विषय लौकिक नायिका के अङ्ग-प्रत्यंग का वर्णन है, अतः यह निर्विवाद है कि उनके ग्रन्थ का नाम, जैसा कि स्वयं लेखक ने भी दिया है, 'सिखनख' ही होना चाहिए, 'नखशिख' नहीं। हमारे इस कथन की पुष्टि इस बात से भी हो जाती है कि काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों का संक्षिप्त विवरण' ग्रन्थ में भाग १ में 'नखशिख' शीर्षक के अन्तर्गत जिन अनेक रचनाओं का विवरण दिया गया है, उनके वर्ण्य विषय का जहाँ-जहाँ स्पष्ट उल्लेख है, वहाँ-वहाँ वे रचनाएँ एकाध अपवाद छोड़कर, अलौकिक व्यक्तित्व से ही सम्बन्धित पायी गयीं। उदा-हरण के लिए निम्नांकित विवरण द्रष्टव्य हैं—

'नखशिख' (पद्य)—कुलपति (मिश्र) कृत। विषय : राधा-कृष्ण का नखशिख।

'नखशिख' (पद्य)—गुलाम नबी (रसलीन) कृत। विषय : राधिका जी का नखशिख।

'नखशिख' (पद्य)—गोकुल (कवि) कृत। विषय : श्रीकृष्ण का नखशिख।

'नखशिख' (पद्य)—प्रेमसखी कृत। विषय : रामजानकी का नखशिख।

'नखशिख' (पद्य)—संत बख्श (बन्दीजन) कृत। विषय : सीताराम का नखशिख।

'नखशिख' (पद्य)—ग्वाल कवि कृत। विषय : कृष्णचन्द्रजी का नखशिख, इत्यादि।

पूर्वोक्त हस्तलिखित ग्रन्थों के विवरण में बलभद्र के ग्रन्थ का नाम भाग १ में 'नखशिख' मिलता है तो भाग २ में 'शिखनख'। लगता है कि वहाँ इस नाम का प्रयोग शिथिलता के साथ किया गया है।

बलभद्र ने 'सिखनख' वर्णन कुल ६७ छन्दों में पूरा किया है। इनमें से अन्तिम 'छप्पय' छन्द को छोड़कर शेष सभी छन्द 'कवित्त' हैं। यह वर्णन 'कच' से आरम्भ करके 'पग के नख' तक आकर ६१ छन्दों में समाप्त होता है। आगे के छः छन्दों में क्रमशः गति, सुभाय सिंगार, सोरह सिंगार, बारह आभरन, देह तथा वयकलस का वर्णन पूरक रूप में आ गया है।

अलंकृत शैली—यह सब वर्णन आलंकारिक शैली में किया गया है और अत्यंत मनोवेधक है। इसमें बहुधा प्रयुक्त अलंकार अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, सन्देह आदि हैं। कहीं-कहीं व्यतिरेक, स्वभावोक्ति, अतिशयोक्ति आदि के भी मनोहारी दर्शन होते हैं। बानगी के तौर पर निम्नांकित अंश देखिए—

अनुप्रास :

(१) पातरि पूतरी पहिरे पवित्र पीत बास,
किधौं ए सकल सुख बासना कौ ध्रान हैं।

(२) किधौं बैस बेलबे के बेलन बनाए बिधि,
सोभा धर सधर सकल सुखदाय की।

(३) कोमल अमल दल केतकी की कली कैं कि,
केसर कलाई चोर मनमथराय की॥

(४) सज्जनता सीलता सलजता सुन्दरताई।
गुन गम्भीर ग्यानता चतुर गोरत्व गुराई॥

अनुप्रास एक साधारण अलंकार होते हुए भी बलभद्र के हाथों में उसे अभिनव सौन्दर्य प्राप्त हुआ प्रतीत होता है। कहीं-कहीं इनके अनुप्रास ने

संगीत के ध्वनि-माधुर्य एवं लयात्मकता के भी दर्शन कराये हैं। कतिपय उदाहरण देखिए —

(१) मरकत सूत किधौं पन्नग के पूत, किधौं
राजत अद्भूत तमराज कै सै तार हैं।
मखतूल गुनग्राम सोभित सरस स्याम,
काम मृग कानन कि कुहू के कुमार हैं॥

(२) भाग कौ सौ बासन सुहाग कौ सौ आसन है,
मोहनी को सासन कर्यौ ते बस लाल है।
काम के तुरंगन की धाप की धरन यह,
किधौं 'बलभद्र' भोरी भामिनी कौ भाल है॥

(३) दरस दरस कौ परस होत 'बलभद्र',
किधौं है सरस साला सनि सुरभान की।

(४) छबिनि की छाया सब सुखनि की सुखदाया,
मोहनी की माया किधौं काया है अनंग की।
चित ही की चातुरी कि आतुरी चरन ही की,
कातरी कपट प्रीत बन्दी सब अंग की॥
'बलभद्र' भाग की सुहाग की सहायक कि,
प्रीत की उदार सखी जोबन के संग की।
पीय सुखदैनी इंदीबर नैनी तेरी गति,
सारस मराल गजराज गति भंग की॥

उपर्युक्त छंदों में नाद-माधुर्य एवं लयबद्धता दर्शनीय है।

उपमा :

विष की लता सी बिन पान, भान दुहिता सी,
आसीविष अलपा सी भामनि की भाँति है।

उत्प्रेक्षा :

(१) पाटी तेरी तरुनि जुगल ऐसी राजै मानौ,
जामी जुग-जमुना सिखा रतनखान की।

(२) नृमल दसन वैन नख मन 'बलभद्र',
मानौ फेन सोहत सुरसरी के नीर के।

(३) पात से उदर पर तेरी रोमराजी मानो,
जमल उरोजन कौ यह मिल सार हैं॥

स्वभावोक्ति :

बैनी नवबाला की बनाय गुही 'बलभद्र',
कुसुम अरुन पाट मन मोहियतु है।
कारी सटकारी नीकी राजत नितंब नीचे,

संदेह :

(१) तम के विपन मैं सरल पंथ सातिग कौं,
किधौं नीलगिर पर गंगाजू की धार है।
किधौं बनबारी बीच राजत रजत रेख,
किधौं चंद कर अंधकार कौ प्रहार है॥
(२) अलप उदर पर तेरी रोमराजी किधौं,
'बलभद्र' बानी की बिपंची ही की ताँत है॥
(३) कोकसाला रूप की कि काम ही की सेज किधौं,
'बलभद्र' कोमल कुलह काम बाज की॥

व्यतिरेक :

कदली के मूल हैं स उख ते सहित एतौ,
सहित मयूख गुनरहित दबे रे हैं।

अतिशयोक्ति :

जामैं तीनों लोक की तरुनीनि की सोभा सब,
सहज सलिल गामनीनि लौं समाति है।

रूपक :

बाला तन सदन सँवारिबे कौ 'बलभद्र',
धर गयो रेखा सूत बंध सुतधार हैं।

सांगरूपक (सन्देह से परिपुष्ट) :

किधौं मुखचंद धरे वाहन कुरंग कंध,
जूवा मरकतन कौ मनहि हरतु है।
किधौं 'बलभद्र' भाल कंचन के भाजन मैं,
दीप जुग नैनन कौं काजर परतु है॥

बलभद्र के अलंकार-विधान की एक उल्लेखनीय विशेषता यह है कि 'योजकस्तत्र दुर्लभः' न्याय से उन्होंने पारम्परिक उपमानों का ही सहारा लेते

हुए उनको अपने ढंग से व्यवहृत या प्रस्तुत किया है। कल्पनारम्यता उनकी कविता का विशेष गुण कहा जाएगा। कुछ उदाहरण लीजिए —

(१) किधौं 'बलभद्र' भाल कंचन के भाजन मैं,
दीप जुग नैनन कौं काजर परतु है।
(२) पीय रूप पीबे कौ अधर आछे 'बलभद्र',
सोतिनि कौ एक पल परत न निद्रा न है॥
(३) खंजनन पिंजर कि कनक के संपुट हैं,
जिन मैं बसत प्यारे प्रीतम कौ प्रान है।
(४) पयभरे भाजनन तिरत मधुप मध्य,
किधौं छीरनिधनी के मधि द्वीप कारे हैं।
बिसद बसन मधि सौंधे की-सी बिंदु मानौ,
मुख देखबे कों मैन दर्पन सँवारे हैं॥
कँवल दलनि पर मनिमय देव मानौ,
पीय मन दुज पूजिबे कों पथ धारे हैं।
छितिधर छिति जीतबै कों काम 'बलभद्र',
तम की तुरी सी कि तरुनि तेरे तारे हैं॥
(५) सोभा के समुंद्रन मे बड़िवा की आभा किधौं,
देवधुनि भारती सु मिली पुन्य काल मैं।
काम कैवर्त्त किधौं नासिका उडुप बैठो,
खेलन सिकार तरुनी के मुखताल मैं।
लोचन सितासित मैं लोहित लकीर मानौ,
बाँधे जुग मीन लाल रेसम के जाल मैं।

सन्देह अलंकार के सहारे एक ही अंग के वर्णन में नव-नवीन कल्पनाओं के अनेकानेक पर्याय प्रस्तुत करने में बलभद्र सिद्धहस्त हैं। निम्नांकित उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

'कच' के वर्णन में उन्होंने मरकत-सूत, पन्नग-पूत, तमराज के तार, मखतूल-गुनग्राम, काममृग-कानन, कुहू के कुमार, शृङ्गार के चमर इत्यादि उपमानों का; 'नथ' के वर्णन में 'नैन नटवान के निकसबे की कुंडरी', 'पारस त्रदस कि चरन चंद रथ कौ', 'कामदेव चकवै कि चक्र निज हथ कौ', 'नाह चित फंदबे कौ फंद रोप्यो मनमथ कौ'; 'कुच' के वर्णन में 'मंगल कलस मकरंद भरे', 'सम दुंदुभी सहोदर समर के', 'चकवा के सावक सताए ससिकर के',

'मैंन के मेवास मन मोहिबे को मोदक', 'सोभातरु के बिमल सुफल फल', 'नाभि' के वर्णन में 'सोभा की तरंगनी के तोय को भँवर', 'सोने की सुपथ भू मदन कटि कीनो है', 'पिय नैन गोलिका', 'खेल की खलेल' इत्यादि विविध एवं कल्पनारम्य नवीन उपमानों का प्रयोग किया है। परंपरागत एवं रूढ़ उपमान-सामग्री का अभिनव ढंग से प्रस्तुतीकरण करने में बलभद्र ने अपनी काव्य-कुशलता का अच्छा परिचय दिया है।

बलभद्र की भाषा—बलभद्र की भाषा प्रौढ़ एवं परिमार्जित है जो भाव-वहन में पूर्णतया सक्षम है। निम्नांकित कवित्त प्रमाण के लिए पर्याप्त हैं—

पाटल नयन कोकनद के से दल दोऊ,
'बलभद्र' बासर उनींदी लखी बाल मैं।
सोभा के सरोवर में बाड़व की आभा कैधौं,
देवधुनी भारती मिली है पुन्यकाल मैं॥
काम-कैवरत किधौं नासिका-उडुप बैठो,
खेलत सिकार तरुनी के मुख-ताल मैं।
लोचन सितासित मैं लोहित लकीर मानौ,
बाँधे जुग मीन लाल रेसम की डोर मैं॥१॥
मरकत के सूत, कैधौं पन्नग के पूत अति,
राजत अद्‌भुत तमराज कैसे तार हैं।
मखतूल गुनग्राम सोभित सरस स्याम,
काम-मृग-कानन, कै कुहू के कुमार हैं॥
कोप की किरन, कै जलज-नील नील-तंतु,
उपमा अनंत चारु चँवर सिंगार हैं।
कारे सटकारे भींजे सौंधे सों सुगंध बास,
ऐसे 'बलभद्र' नवबाला तेरे बार हैं॥२॥

इस प्रकार, जहाँ तक भाषा का सवाल है, बलभद्र ने परिष्कृत ब्रजभाषा का ही सर्वत्र प्रयोग किया है। बलभद्र के 'सिखनख' की लोकप्रियता एवं व्यापक ख्याति का प्रधान कारण, हमारी सम्मति में, बलभद्र की भाषा की यही प्रौढ़ता, परिपक्वता एवं भावानुगामिता ही है। भाषा पर बलभद्र का असामान्य नियंत्रण एवं प्रभुत्व दिखाई देता है, उसे वे इच्छानुसार मोड़ देते हैं। कोमल-कांत पदावली, अलंकृत शब्द-संगुम्फन, सरल एवं सुगठित वाक्य-विन्यास, मार्मिक भावाभिव्यक्ति आदि गुणों के कारण बलभद्र की प्रस्तुत कृति

अनायास ही आकर्षक एवं अद्‌भुत बन पड़ी है। उनकी भाषा यद्यपि तत्सम-प्रचुर है, फिर भी उसमें तद्‌भव, देशज एवं अरबी-फ़ारसी आदि विदेशी भाषाओं के शब्दों को भी उदारता से स्वीकार लिया गया है। कुछ नमूने देखिए —

तत्सम शब्द—अज़िर; अलि; आनन; आपगा; करतल; कलिका; कुरङ्ग; कुसुम; कुहू; कोकनद; ग्राम; ग्रीव; घनसार; चमर; चारु; तन्तु; तुला; दल; द्वीप; नासिका; निगड; नितम्ब; निमिष; निलय; पङ्कज; पक्व; पटल; पन्नग; पाटल; पारद; पीत; पुलिन्द; बिम्ब; भृकुटि; मनसिज; मुकुट; मृग; मेचक; रन्ध्र; रसना; लोचन; वपु; वातायन; वारिज; वितान; सरोज; सलिल कुण्ड; सुगन्ध; सुरभि; सुरस; इत्यादि।

तद्‌भव शब्द—करतार (सं० 'कर्तृ'); कँवल (सं० 'कमल'); काजर (सं० 'कज्जल'); किरन (सं० 'किरण'); गरब (सं० 'गर्व'); गोत (सं० 'गोत्र'); जस (सं० 'यश'); दुज (सं० 'द्विज'); दुति (सं० 'द्युति'); परस (सं० 'स्पर्श'); पूत (सं० 'पुत्र'); बछ (सं० 'वत्स'); सातिग (सं० 'सात्त्विक'); सिँगार (सं० 'शृङ्गार'); सिखा (सं० 'शिखा'); सूत (सं० 'सूत्र'); इत्यादि।

देशज शब्द—करेरे; किधौं; गाड़; गुदकारो; चुनरी; झाँई; डग; डाँवा-डोल; तनक; तरौना; थाती; दोहाई; धाप; नीकी; पनारी; फंद; फाँक; फौंक; बिछिया; बैसर; मखतूल; रँगरेज; लकीर; लीक; सकेल; हमेल; इत्यादि।

अरबी शब्द—जिहाज़ (जहाज); रद्द; इत्यादि।

फ़ारसी शब्द—गुमान; जोर; तबल; तरकस (तरकश); नवबति (नौबत); पातसाही; मोरचा; रेसम (रेशम); सरकस (सरकश); हजार; इत्यादि।

बलभद्र के 'सिखनख' के कवित्त इतने सरस, मार्मिक एवं लालित्यपूर्ण हैं कि इनके आधार पर कहा जा सकता है कि प्रस्तुत कृति में बलभद्र के आचार्यत्व की अपेक्षा उनका कविरूप ही अधिक परिपुष्ट एवं निखरा हुआ परिलक्षित होता है। 'नखशिख' परम्परा में बलभद्र का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। अयोध्यासिंह उपाध्यायजी ने उनके विषय में अपनी मान्यता इन शब्दों में दी है —

"नखशिख सुन्दर ग्रन्थ है, और उसकी रचना बड़ी प्रौढ़ है। इसके जोड़ का नृपशंभु का 'नखशिख' नामक ग्रन्थ है, परन्तु यह ग्रन्थ उक्त ग्रन्थ के

अनुकरण से ही लिखा गया है। और भी नखशिख के ग्रंथ हैं, परन्तु बलभद्र जी के 'नखशिख' की समता कोई नहीं कर सका।"[१]

वास्तव में बलभद्र की भाषा में प्रौढ़ता एवं लालित्य ओतप्रोत हैं, कोमल-कांत पदावली से वह युक्त है। भाषा पर बलभद्र का पूर्ण अधिकार परिलक्षित होता है। अलंकृत शब्द-संगुम्फम, सरल एवं सुगठित वाक्य-विन्यास, मार्मिक एवं सशक्त भावाभिव्यक्ति आदि गुणों के कारण बलभद्र का 'सिखनख' अतीव आकर्षक बन गया है।

बलभद्र के द्वारा लिखित 'सिखनख' एवं 'दूषण-विचार' जैसा एकाध ग्रंथ ही आज उपलब्ध है। बलभद्र के काव्य का सही मूल्यांकन उनके सभी ग्रंथों की उपलब्धि के पश्चात् ही हो सकता है। किन्तु वर्तमान समय तक उनका जितना कृतित्व प्रकाश में आया है, उसके किंबहुना उनके 'सिखनख' ग्रन्थ के आधार पर भी उन्हें नखशिख-परम्परा के श्रेष्ठ कवियों की श्रेणी में बिठाया जा सकता है।

८. पाठ-सम्पादन

उपलब्ध सामग्री :

बलभद्र के 'सिखनख' ग्रंथ से संबंधित विपुल सामग्री हस्तलिखित रूप में उपलब्ध है, कुछ तो मूल की प्रतिलिपि के रूप में और कुछ मूलसहित विभिन्न टीकाकारों की टीकाओं के रूप में। एकाध सटीक ग्रंथ मुद्रित रूप में भी प्राप्त होता है, किन्तु इस ग्रंथ की पाठालोचन या पाठानुसंधानपूर्वक संपादित कोई प्रति मेरे देखने में नहीं आई। 'नखशिख' विषयक उपलब्ध सामग्री का विवरण नीचे दिया जा रहा है।

(१) हस्तलिखित ग्रंथ :

'नागरी प्रचारिणी सभा', काशी द्वारा प्रकाशित 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' के अनुसार बलभद्र कवि के 'सिखनख' ग्रंथ की कुल ७ हस्तलिखित प्रतियाँ उपलब्ध हैं —

(क) लिपिकाल—संवत् १८०२। प्राप्ति-स्थान—पं० रघुवीरचरण मिश्र, बिल्हौर (कानपुर)। दे० खोज-विवरण सन् १९२६-१९२८, क्र० सं० २९ ए।

---

१. 'हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास'—हरिऔध, पृ० ३१०।

(ख) लिपिकाल—संवत् १८०२। प्राप्ति-स्थान—पं० शिवकुमार, अहनापुर, डा० बसोरा (सीतापुर)। दे० खोज-विवरण सन् १९२६-१९२८, क्र० सं० २९ बी।

(ग) लिपिकाल—संवत् १८०७। प्राप्ति-स्थान—विद्याप्रचारिणी जैन सभा, जयपुर। दे० खोज-विवरण सन् १९००, क्र० सं० १११।

(घ) लिपिकाल—सं० १८७२। प्राप्ति-स्थान—पं० महाबीर मिश्र, गुरुटोला, आजमगढ़। दे० खोज-विवरण सन् १९०९-११, क्र० सं० १५।

(ङ)[1] लिपिकाल—सं० १८८५। प्राप्ति-स्थान—पं० संतबखश तिवारी, तिवारी का पुरवा, डा० महाराजगंज (बहराइच)। दे० खोज-विवरण सन् १९२३-२५, क्र० सं० २८।

(च) [लिपिकाल का उल्लेख नहीं है]। प्राप्ति-स्थान—जोधपुर नरेश का पुस्तकालय, जोधपुर। दे० खोज-विवरण सन् १९०२, क्र० सं० ४५।

(छ) [लिपिकाल का उल्लेख नहीं है]। प्राप्ति-स्थान—श्री अद्वैतचरण गोस्वामी, घेरा श्रीराधारमणजी, वृन्दावन (मथुरा)। दे० खोज-विवरण सन् १९२९-३१, क्र० सं० २३।

विशेष—उपर्युक्त ७ प्रतियों के अतिरिक्त खोज-रिपोर्ट में प्राप्त और एक प्रति का उल्लेख श्री जवाहरलाल चतुर्वेदी द्वारा संपादित 'ब्रजभाषा : रीतिशास्त्र ग्रंथ-कोश' में प्राप्त हुआ। काशी नागरी प्रचारिणी सभा के 'हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण' में उसका समावेश न पाकर आश्चर्य हुआ। इस प्रति का विवरण इस प्रकार है—

(ज) [लिपिकाल का उल्लेख नहीं है]। प्राप्ति-स्थान—जगन्नाथ लालाजी त्रिगृही, गोकुल मथुरा। दे० खोज-विवरण सन् १९१२, पृ० १४०।

उपर्युक्त प्रतियों का लिपिकाल भिन्न-भिन्न है, किन्तु सभी १९वीं शती की ही लिपिबद्ध की हुई हैं। अन्तिम तीन प्रतियों [(च), (छ) और (ज)] का लिपिकाल अज्ञात है।

---

१. इस प्रति का संपादन बाबू जगन्नाथदास 'रत्नाकर' द्वारा किया गया जो भारत-जीवन प्रेस, काशी में सन् १८९४ ई० में मुद्रित हो चुकी है। यह मूल रूप में ही है, सटीक नहीं।

इसके अतिरिक्त २०वीं शती की लिपिबद्ध की हुई तीन प्रतियाँ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के हिन्दी संग्रहालय में उपलब्ध हैं जिनका विवरण इस प्रकार है —

(१) वेष्टन एवं ग्रंथ-संख्या	७५६ / ८६२	रचनाकाल अज्ञात	लिपिकाल १९०९ वि० ।
(२) ,, ,,	७०८ / ७७०,१	,, ,,	लिपिकाल अज्ञात ।
(३) ,, ,,	२०३० / ४३६६	,, ,,	लिपिकाल १९७४ वि० ।

पुणें विद्यापीठ के जयकर ग्रंथालय में दो प्रतियाँ उपलब्ध हैं, एक प्रति मूल रूप में और दूसरी मूलसहित टीका के रूप में, जिनका विवरण इस प्रकार है—

(१) लिपिकाल सं० १८९० । ग्रंथ क्र० ४३४/९ । लिपिकार वरन्हारसिंघ ।

(२) लिपिकाल अज्ञात । ग्रंथ क्र० २२८१/१ । सटीक । टीकाकार चंद्रसेन मोहणोत ।

श्री जवाहरलाल चतुर्वेदी द्वारा संपादित 'ब्रजभाषा : रीतिशास्त्र ग्रंथ-कोश' के 'नखशिख : साहित्य' शीर्षक के अंतर्गत बलभद्रकृत 'सिखनख' ग्रंथ की उपर्युक्त प्रतियों के अतिरिक्त निम्नांकित कुछ और प्रतियों का विवरण प्राप्त होता है —

(१) प्राप्ति-स्थान—जैन सिद्धांत भवन : आरा, पुस्तक संख्या ४१, २६।

(२) प्राप्ति-स्थान—सरस्वती भंडार : उदयपुर (मेवाड़)—३ प्रतियाँ । पुस्तक संख्या ३३, ४०९ तथा ४२४, सं० १७९८ वि० की ।

(३) प्राप्ति-स्थान—कविराव मोहनसिंह : उदयपुर (मेवाड़), सं० १९४२ वि० की ।

(४) प्राप्ति-स्थान—याज्ञिक संग्रहालय : ना० प्र० सभा, काशी, ३ प्रतियाँ ।

(५) प्राप्ति-स्थान—मन्नूलाल : पुस्तकालय, गया (बिहार) ।

(६) प्राप्ति-स्थान—गीता-प्रेस : गोरखपुर, पुस्तक संख्या ३३८ ।

(७) प्राप्ति-स्थान—पुरातत्त्व संग्रहालय : जामनगर (सौराष्ट्र) ।

(८) प्राप्ति-स्थान—द्वारकाधीश मन्दिर, पाटन (गुजरात) ।

(९) प्राप्ति-स्थान—अनूप संस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर (राजस्थान) ।

(१०) प्राप्ति-स्थान—पं० शिवकुमार, अहनापुर; पो० बसौराः सीतापुर (अवध)।

(११) प्राप्ति-स्थान—नवनीत पुस्तकालय, मथुरा, पुस्तक संख्या ४६२५१।

(२) हस्तलिखित टीका-ग्रंथ (मूलसहित):

उपर्युक्त हस्तलिखित ग्रंथों के अतिरिक्त बलभद्र-कृत 'सिखनख' ग्रन्थ की कई हस्तलिखित टीकाएँ भी मूलसहित उपलब्ध होती हैं। उनका विवरण इस प्रकार है —

(१) **गोपाल लाल बंदीजन** (१८५७ से १८९२ वि० सं०)—'शिखनख-दर्पण' (पद्य)। रचनाकाल सं० १८९१। विषय : बलभद्र-कृत 'नखशिख' की टीका। लिपिकाल सं० १९५६। प्राप्ति-स्थान—लाला हीरालाल चौकीनवीस, चरखारा। दे० खोज-विवरण सन् १९०६-०८, क्र० सं० ४० ए।

[प्रस्तुत गोपाललाल श्यामदास के पुत्र थे। चरखारी नरेश राजा रत्नसिंह के आश्रित। संभवतः भगवन्तराय खीची के भी आश्रित। इन्हें 'सुकवि' की उपाधि मिली थी। सं० १८९१ के लगभग वर्तमान।]

(२) **प्रतापसाही बंदीजन**—उपस्थिति-काल सं० १७६० ?—दे० 'शिवसिंह सरोज'। रचना-काल सं० १८८२-१८९६ (?) हि० हिं० पु० सं० विवरण, पृ० ५८४-८५। रचनाकाल सं० १८८१-१९०१—साहित्य कोश, खण्ड २। रतनेश कवि के पुत्र। रचनाकाल सं० १८८२-१८९६। चरखारी (बुंदेलखण्ड) नरेश विक्रमसाहि और रत्नसिंह के आश्रित। 'नखशिख' (पद्य)। विषय : बलभद्र-कृत 'नखसिख' की टीका। रचना संवत् १८९५ वि०। लिपिकाल सं० १९२५। प्राप्ति-स्थान—भारती भवन पुस्तकालय, छतरपुर। दे० खोज-विवरण सन् १९०६-०८, क्र० सं० ९१ के।

(३) **मणिराम** बतीसी (?) निवासी या **मनिराम** (द्विज)। उनियारो (नागरचाल) के राव महासिंह तोमर के आश्रित। सं० १८४२ के लगभग वर्तमान। 'नखशिख' सटीक (गद्यपद्य)। विषय : बलभद्रकृत 'नखसिख' की टीका। प्राप्ति-स्थान—(क) श्री जगन्नाथराव टैगोर, गोकुल (मथुरा)। दे० खोज-विवरण, सन् १९१२-१९१४। क्रमसंख्या १०८। (ख) पं० परशुराम चतुर्वेदी, एम० ए०, एल-एल०, बी० बलिया। दे० खोज-विवरण, १९४१; क्र० सं० ५३५ (अप्रकाशित)।

(४) **चंद्रसेन मोहणोत** : रचनाकाल १७९९ पौ० शु० १३, मंगलवार। प्राप्ति-स्थान—पुणें विद्यापीठ : जयकर ग्रंथालय। क्र० सं० २२८१/१।

(५) **पजनेश**। 'मधुप्रिया' (?)। रचना संवत् १९०५ वि०।

(६) **रसराम** (?)। रचना-काल अज्ञात। (अन्य विवरण भी अप्राप्त है।)

नोट—उपर्युक्त सूची में से अन्तिम दो प्रतियाँ संदिग्ध हैं। उक्त दोनों ग्रंथों की सूचना श्री जवाहरलाल चतुर्वेदी जी के 'ब्रजभाषा रीतिशास्त्र-ग्रंथ कोश' में प्राप्त हुई। किन्तु पजनेश या रसराम (वास्तविक नाम रसरास होना चाहिए, जॉर्ज ग्रियर्सन ने भूल से रसराम लिखा है; इनका असली नाम राम नारायण था, रसरास इनका उपनाम है।[1]) इन दोनों कवियों ने बलभद्र के 'सिखनख' की कोई टीका लिखी हो, इस आशय की कोई भी सूचना अन्यत्र प्राप्त नहीं होती। जवाहरलाल चतुर्वेदीजी के मतानुसार 'मधुप्रिया' बलभद्र के 'सिख नख' ग्रन्थ की टीका का नाम है, किन्तु वास्तविकता यह है कि 'मधुप्रिया' स्वयं पजनेश के ही लिखे हुए ग्रंथ का नाम है, टीका का नहीं और इस ग्रंथ का विषय राधा का नखशिख है, जब कि बलभद्र का ग्रंथ सामान्य नायिका के नखशिख-वर्णन से सम्बन्धित है।[2] रसरास कवि के लिखे हुए ग्रंथ 'हजारा' एवं 'कवित्त रत्न मालिका' हैं। पता नहीं किस आधार पर श्री जवाहर लाल चतुर्वेदीजी ने पजनेश और रसराम (असल में 'रसरास') कवियों को बलभद्र के 'सिखनख' के टीकाकार घोषित किया है। फलतः बलभद्र के 'सिखनख' ग्रंथ के प्रामाणिक टीकाकार वर्तमान समय तक उपलब्ध सामग्री के अनुसार चार हैं—१. गोपाललाल बन्दीजन, २. प्रतापसाही बन्दीजन, ३. मणिराम या मनिराम और ४. चंद्रसेन मोहणोत।

मणिराम की टीका के सम्बन्ध में डॉ० मोतीलाल गुप्त की निम्नलिखित सूचनाएँ विचारणीय हैं—

"बलभद्र का 'सिखनख' हिन्दी में बहुत प्रसिद्ध माना जाता है और साथ ही कठिन भी। इस कठिनाई का ध्यान रखते हुए मनिराम ने बहुत सचेत होकर इस ग्रन्थ-रत्न की '**सर्वप्रथम टीका**' हिन्दी साहित्य को प्रदान की। अपनी टीका के सम्बन्ध में उनका विचार था—

> 'सिखनख' जौ बलभद्र कौ, कठिन पदन की रीति।
> सुगम हौहि इहि साख ते, ग्रन्थन की सुप्रतीति॥'

अतएव मनीराम द्विज ने इस कठिन ग्रन्थ को सुगम करने के लिए इसकी टीका

---

१. **'सरोज सर्वेक्षण', क्र० ७५०।**

२. **'हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों का संक्षिप्त विवरण', द्वितीय खंड, पृ० १२८।**

लिखी। ...मनीराम की यह टीका हिन्दी साहित्य में किया गया एक उत्तम प्रयास है और इस टीका का मूल्य तब और भी बढ़ जाता है जब हम देखते हैं कि यह टीका सबसे पुरानी है।"[१]

उपर्युक्त कथन से संबंधित पद-टिप्पणी में निम्नांकित सूचना और पायी जाती है—

"....इसमें संदेह नहीं कि बलभद्र मिश्र के बनाये 'सिखनख' का बहुत प्रचार था किन्तु साथ ही यह एक कठिन ग्रंथ भी था। साहित्य के इतिहास में इनके इस ग्रंथ के कई टीकाकारों के नाम मिलते हैं। सबसे पहला टीकाकार गोपाल कवि माना जाता है। इन कवि की टीका का समय मिश्रबंधु, शुक्ल, चतुरसेन आदि इतिहासकारों ने १८९१ लिखा है किन्तु हमारी खोज में पाई गई मनीराम वाली टीका गोपाल कवि की टीका से भी ५० वर्ष पुरानी है। कवि ने इस टीका का समय इस प्रकार दिया है—

अष्टादस ब्यालीस हैं, संवत् मगसिर मास।
कृष्णपक्ष पाँचे सुतिथि, सौमवार परगास।।

यह प्रति जो हमें मिली, उसका लेखन भी गोपाल कवि की टीका से पहले ही हो चुका था। इसके लिपिकार थे 'भेरू सेषावत' और लिपिबद्ध करने का समय है संवत् १८७७ वि०—

श्रावण सुदि एकादसी, भानुवार मनु (ध्रु) मांस।
मुनि मुनि वसु ससि सु बुधि सुनि, यह संवत परगास।।
सिखनख टीका सहित यह, है सिंगार को मूल।
भैरूं सेषावत लिख्यौ, चतुर रहे मन फूल।।

इस पुस्तक का नाम प्रायः 'नखसिख' लिखा गया है, परन्तु इसका नाम 'सिखनख' है और पुस्तक में वर्णन भी 'सिख' से आरंभ कर 'नख' तक किया गया है।"[२]

आगे चलकर और एक स्थान पर भी डॉ० गुप्त ने कहा है कि कवि मनीराम की टीका को बलभद्र के 'सिखनख' पर प्रथम टीका मानना चाहिए, अन्य प्रयास इससे बहुत पीछे के हैं।[३]

---

१. 'मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन'—डॉ० मोतीलाल गुप्त, पृ० ६८-७०।

२. वही, पृ० ६८-७०।

३. वही, पृ० २६४-२६५।

उपर्युक्त सभी सूचनाओं में डॉ० मोतीलाल गुप्त का सर्वत्र यही दावा रहा है कि उनकी खोज में प्राप्त मनीराम की टीका ही सबसे पुरानी है, जब कि वास्तविकता यह है कि **चंद्रसेन मोहणोत ही बलभद्र-कृत 'सिखनख' के सर्वप्रथम टीकाकार हैं।** डॉ० गुप्त के अनुसार मनीराम की टीका का रचनाकाल सं० १८४२ है, जब कि चंद्रसेन मोहणोत की टीका का रचनाकाल सं० १७९९ है, यानी मनीराम की टीका से ४३ वर्ष पहले का है। यह टीका पुणें विद्यापीठ के जयकर ग्रंथालय में उपलब्ध है। अतः निस्संदेह कहा जा सकता है कि चंद्रसेन मोहणोत की बलभद्र-कृत 'सिखनख' की टीका ही उपलब्ध टीकाओं में सबसे पुरानी है।

(३) मुद्रित ग्रंथ :

बलभद्र के 'सिखनख' के मूल एवं सटीक दोनों प्रकार के ग्रंथों का मुद्रांकन भी हुआ है, यद्यपि वह अत्यल्प मात्रा में ही है। विवरण इस प्रकार है —

१. **सिखनख**—रच० बलभद्र कवि। संपा० गोविंद गिल्लाभाई सौराष्ट्र, प्रमु० भारत जीवन प्रेस, काशी, सं० १८९४ ई०।

२. **सिख-नख**—रच० बलभद्र कवि। सटीक, टीका०—प्रतापसाहि, संपा०—बाबू जगन्नाथदास 'रत्नाकर', प्रमु० भारत जीवन प्रेस, काशी।

(४) संकलन ग्रंथ :

उक्त मुद्रित ग्रंथों के अतिरिक्त 'नखशिख' साहित्य के कुछ ऐसे संकलन ग्रंथ भी प्रकाशित हो चुके हैं जिनमें अन्यान्य कवियों की 'नखशिख' से संबंधित रचनाओं के साथ ही साथ बलभद्र के 'सिखनख' विषयक कतिपय छंदों को भी स्थान दिया गया है। ऐसे कुछ ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है —

१. **नख-सिख : संग्रह**—संकलनकर्ता—पं० राधावल्लभ, प्रका०—रामरत्न वाजपेयी, मु०—लखनऊ प्रिं० प्रेस, लखनऊ, सन् १९०२ ई०। इसमें १०८ कवियों का संग्रह है। बलभद्र कवि भी इसमें समाविष्ट हैं।

२. **नख-सिख : हजारा** (संग्रह)—संपा० परमानंद सुहाने, प्रमु० नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, सं० १८९३ ई०। १४५ कवियों के इस संग्रह में भी बलभद्र की 'सिखनख' विषयक रचनाएँ अंतर्भूत हैं।

संभवतः 'मनोज-मंजरी' संपा० नकछेदी तिवारी, डुमरांव, उपनाम 'अजान' कवि, 'सुंदरी तिलक' (संक० भारतेंदु हरिश्चन्द्र), 'श्रृंगार-संग्रह' (रच० तथा संक० सरदार कवि, काशी) इत्यादि ग्रंथों में भी बलभद्र कवि की रचनाओं का समावेश पाया जा सकेगा।

उपलब्ध साहित्य में से बहुत से ग्रन्थ व्यक्तिगत ग्रन्थालयों की संपत्ति होने से प्राप्त नहीं हो सके। जो प्रतियाँ प्राप्त हो सकीं, उनमें पुणें विद्यापीठ की प्रति ही सब से प्राचीन (लिपिकाल सं० १८९०) होने के कारण उसी को पाठ-सम्पादन का आधार बनाते हुए शुद्ध पाठ का निर्धारण किया गया है। पुणें विद्यापीठ वाली मूल प्रति को 'क' क्रमांक दिया गया है, टीकाकार चन्द्रसेन मोहणोत वाली सटीक प्रति को 'ख' क्रमांक और काशी नागरी प्रचारिणी सभा के ग्रन्थालय से प्राप्त 'भारत जीवन प्रेस' वाली प्रति को 'ग'।[1]

प्राप्त सामग्री का परीक्षण:

प्राप्त प्रतियों में (ख) प्रति सबसे अधिक भ्रष्ट है। लिपिकर्ता के असावधानीजन्य एवं अज्ञान से उद्भूत प्रमाद इस प्रति में अन्य प्रतियों की तुलना में अधिक मात्रा में पाये गये। (क) प्रति बहुत कुछ शुद्ध है। (ग) प्रति में सम्पादक के द्वारा किये गये संस्कार या संशोधन के दर्शन यत्र-तत्र होते हैं। विशेषकर ब्रजभाषा के शब्दों को उनके मूल रूप में न रखकर कई जगह विशुद्ध खड़ीबोली के या संस्कृत के तत्सम शब्दों में रूपांतरित किया गया दिखाई दिया। कुछ उदाहरण इस इस प्रकार हैं :—'सातिग' (सात्त्विक), 'नीलगिर' (नीलगिरि), 'हासिरस' (हास्यरस), 'सुखतलप' (सुखतल्प), 'पोमनी' (पद्मिनी), 'पलव' (पल्लव), 'मधि' (मध्य), 'कँवल' (कमल), 'दुज' (द्विज), 'काजर' (कज्जल), 'पपीलका' (पिपीलिका), 'श्रवन' (श्रवण), 'सौत' (स्रोत), 'दुजराज' (द्विजराज), 'मिरिचका' (मरीचिका), 'ग्रह' (गृह), 'पेम' (प्रेम), 'सरसुती' (सरस्वती), 'उदियाचल' (उदयाचल), 'नाभ' (नाभि), 'बिपंची' (विपंचि), 'ग्यान' (ज्ञान), 'दुरद' (द्विरद), 'भामनी' (भामिनी), 'प्रीत' (प्रीति), 'चित' (चित्त), 'नृमल' (निर्मल), 'भाग' (भाग्य) इ०।

---

१. वस्तुतः यह प्रति मुद्रित रूप में है, किन्तु जिस मूल हस्तलिखित प्रति का वह मुद्रण है, वह सं० १८८५ में लिपिबद्ध की हुई है। प्राप्ति-स्थान—पं० संतबख्श तिवारी का पुरवा (बहराइच)।

लिपिकर्ता की असावधानी या अज्ञान से लिपि-कार्य में बहुत कुछ गड़बड़ी दिखाई दी। उदाहरण के लिए (ख) प्रति के कई छंदों में कुछ वर्ण कम या अधिक पाये गये। इस तरह के छंद-दोष (क) और (ग) प्रति में कम हैं। किन्तु, जहाँ तक मेरी सम्मति है, ये प्रमाद लिपिकर्ताओं के समझने चाहिए, कवि के सभी छंद पिंगल की दृष्टि से निर्दोष ही हैं। 'ख' प्रति में एक स्थल पर चौथा चरण छूट गया है या छोड़ दिया गया है, स्यात् इसलिए कि मूल प्रति (जिससे प्रतिलिपि की गयी होगी) का संबंधित अंश सुवाच्य या स्पष्ट नहीं था। निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

(ख) प्रति में

(i) छंद क्र० ८ का चौथा चरण इस प्रकार है —

काम तुला पलाहै कि पलकि तेरे पोमनी,
कि भया के कपाट हैं कि तारिन के त्रान हैं।

यहाँ एक वर्ण अधिक है।

(ii) छंद क्र० ११ के तीसरे चरण में एक वर्ण कम है —

काम कैवर्त्त किधौं नासिका उडुप बैठो,
खेलन सिकार तरुनी के मुखताल मैं।

(iii) छंद क्र० २९ में चौथे चरण में तीन वर्ण अधिक हैं —

पीय कौ कपट कपाट परिपातन कौ चन्द्रहास,
सुख के सुमनि कि किसोरी तेरो हास्य है।

(iv) छंद क्र० ३९ में प्रथम चरण में एक वर्ण कम है —

फूले मधुमाधवी के पुहुप परन किधौं,
'बलभद्र' पंचसाखा देवरें तरकी।

(वास्तव में यहाँ दो वर्ण कम समझने चाहिए, क्योंकि 'देवरें तर की' शब्द ग़लत हैं, 'देवतर की' होना चाहिए था, 'रें' वर्ण असावधानी से जोड़ा गया प्रतीत होता है।)

(v) छंद क्र० ४५ में दूसरे चरण में ३ वर्ण कम हैं —

रहे तहाँ रतिईस पुलिंद रयन दिन,
सविष पान पहुपा कौ धनु हैं।

(vi) छंद क्र० ५४ में चौथे चरण में एक वर्ण अधिक है —

श्रोनन की गुरुताई सुलपताई लंक भयो,
बारहै बरस गुरु सिष कौ मिलाप है।

(vii) छंद क्र० ६४ में चौथा चरण छूट गया है।

(viii) छंद क्र० ६५ में प्रथम चरण में दो वर्ण कम हैं—

बेनी भाल माँग श्रुत नासिका के 'बलभद्र',
कंठ के कनक सुबर अपार हैं।

'क' प्रति में इस चरण में एक वर्ण कम है, वहाँ यह चरण इस प्रकार मिलता है—

बेनी भाल माँग श्रुत के नासिका के 'बलभद्र',
कंठ के कनक सुबरन अपार है।

'क' प्रति में ४३वें छंद का प्रथम चरण त्रुटित है जिसमें पाँच वर्ण छूट गये हैं, फलतः छंद सदोष हो गया है।

'ग' प्रति में १२वें छंद का चौथा चरण त्रुटिपूर्ण है, उसमें एक वर्ण कम है—

बाला तेरे नैन बिसाल साल सौतिन के,
बलभद्र सान हैं सोहाग खरसान के।

इसी प्रकार (ग) प्रति में, ३९वें छंद के दूसरे चरण में दो वर्ण कम हैं—

केसर कली सी कलधौत की फली सी किधौं
भली भाँति कुचलता कामसर की।

इस चरण में 'फूली' शब्द छूट गया है। सही चरण इस प्रकार है—

'केसर कली सी कलधौत की फली सी किधौं
फूली भली भाँति कुचलता कामसर की।'

छंद की शुद्धता की दृष्टि से 'क' और 'ग' प्रतियाँ बहुत कुछ निर्दोष हैं।

हस्तलेख एवं हिन्दी भाषा की प्रवृत्ति से अनभिज्ञ लिपिकार पाठ के साथ न्याय नहीं कर सके। जहाँ भाषा या मूल अंश उनकी समझ में नहीं आया, वहाँ उन्होंने वैसा ही लिख दिया जैसा उनकी समझ में आया हो; वैसे ही, जहाँ भाषा समझ में आयी और उन्हें लगा कि अमुक पाठ होना चाहिए, वहाँ मूल पाठांश को सुधार कर लिख दिया है, किन्तु ऐसा करना अनधिकार चेष्टा ही कहा जाएगा।

हस्तलिखित एवं मुद्रित दोनों प्रकार के ग्रन्थों में छंदों (अंग-वर्णन) का क्रम दो-एक अपवादों को छोड़कर लगभग एक-सा है। 'ग' प्रति में ५२वाँ 'मदन-स्थान' विषयक छंद संभवतः लिपिकर्ता ने ही अश्लीलता के विचार से छोड़ दिया है जिससे कि 'क' और 'ख' प्रतियों में कुल छंदों की संख्या ६७ है, जब कि 'ग' प्रति में वह ६६ ही है। इसके अतिरिक्त 'ग' प्रति में कुछ छंदों का क्रम अन्य प्रतियों के क्रम से भिन्न है। उदाहरणार्थ, 'रोमराजी-वर्णन' वाले ४७वें एवं ४८वें छंदों के क्रम में 'ग' प्रति में विपर्यय है, यानी यहाँ ४७वें के स्थान पर ४८वाँ और ४८वें के स्थान पर ४७वाँ छंद रखा गया है। संभवतः यह लिपिकर्ता की भूल है। इस छंद के विषय में 'क' प्रति के लिपिकार ने भी भूल की है। वहाँ यह छंद बहुत ही अशुद्ध लिखा गया है जिसमें बीच के दो चरणों के अंश नहीं हैं जिससे छंद त्रुटित हो गया है, यद्यपि ऐसी असावधानियाँ 'क' प्रति में नगण्य रूप में ही दृष्टिगोचर हुईं।

इसी प्रकार 'ग' प्रति में 'नितम्ब-वर्णन' एवं 'जंघा-वर्णन' वाले छंद क्र० ५३ और ५४ में क्रम-विपर्यय है। वैसे ही 'बिछिया वर्णन' (छंद क्र० ५९) और 'नूपुर वर्णन' (छंद क्र० ६०) के सम्बन्ध में भी 'ग' प्रति में क्रम-विपर्यय है।

उपर्युक्त क्रम-विपर्यय को अपवादस्वरूप मानकर छोड़ दिया जाए तो अन्यत्र कहीं भी छंदों या अङ्ग-प्रत्यङ्ग के वर्णन-क्रम में कोई परिवर्तन नहीं है।

कहीं-कहीं छंदों की पंक्तियों में शब्दों का क्रम भिन्न पाया गया तो कहीं-कहीं एकाध पंक्ति पूर्णतः नवीन रूप में मिली। निम्नलिखित उदाहरण इस दृष्टि से विचारणीय हैं—

(१) १२वें छंद में ३रे और ४थे चरणों के 'ख' और 'ग' प्रतियों के क्रम में विपर्यय है।

(२) १५वें छंद के २रे, ३रे और ४थे चरणों के क्रम में भी 'ख' और 'ग' प्रतियों में ऐसा ही विपर्यय पाया जाता है।

(३) 'ग' प्रति में २३वें छंद का तीसरा चरण अन्य प्रतियों के सम्बन्धित चरण से भिन्न है, जो इस प्रकार है—

उपमान आन मनरंजन बिहारी रति,
तांडव के तार जिन्हें जानत जहान है।

यही चरण 'क' और 'ख' प्रतियों में निम्नानुसार है—

उपमान आन प्रानरंजन बिहारी वर,
सत तांडव के ताल जानत सुजान हैं।

कहीं-कहीं विभिन्न प्रतियों में पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग पाया गया, जैसे 'मापत' के बदले 'नापत', 'तिरत' के बदले 'पैरत', 'मधि' के बदले 'बीच', 'मांनौ' के बदले 'कैधों', 'छितिधर' के बदले 'छितिपति', 'काम' के बदले 'काज', 'निकस' के बदले 'निकरि', 'तपस्या' के बदले 'तपोबल', 'सुचि' के बदले 'सुभ', 'मुखपंकज' के बदले 'मुखकमल', 'सोहियत' के बदले 'सोभियत', 'पदमपद' के बदले 'कमलपद', 'पातसाही' के बदले 'बादसाही', 'करपल्लव' के बदले 'पानिपल्लव', 'लोचन' के बदले 'नैन', 'कलुपन' के बदले 'दुखन', 'रूप' के बदले 'छबि', 'सोहत' के बदले 'सोभित' इ० ।

ग्रंथारम्भ में मंगलाचरणसूचक कोई विशेष अंश नहीं पाया गया । ग्रंथान्त में समाप्तिसूचक अंशों में विभिन्न प्रतियों में अन्तर है । जैसे--

(क) प्रति में--'इति श्री बलभद्रकृत नषसिष समाप्तं ।। मीती आसाढ़ सुद १२ गुरुवार संमत १८९०' ।

(ख) प्रति में--दोहा--'इह सिषनष अर्थ मैं भूल कछू जो होय । चंद करत अरदास कवि षिमा कीजियो जोय ।। इति श्री सिषनष टीकासहित सम्पूर्ण ।'

(ग) प्रति में--'इति श्री ओड़छा नगर निवास दुज कुल मुकुट माणिक्य मिश्रोपनामक सुकवि शिरोमणि बलभद्र कविकृत सिखनख संपूर्णम् ।'

लगता है, समाप्ति से सम्बन्धित यह सूचना कवि की नहीं, लिपिकर्ता की ही है । 'क' प्रति में लिपिकाल का निर्देश तो इसका स्पष्ट प्रमाण है ही, किन्तु 'ख' प्रति की टीकाकार की क्षमा-प्रार्थना एवं 'ग' प्रति का कवि के विषय में प्रशंसापरक उल्लेख भी इस बात का परिचायक है कि उक्त सूचनाएँ कवि की निज की लिखी हुई नहीं हैं ।

प्रतियों की विशेषताएँ :

विभिन्न प्रतियों में पायी जानेवाली सर्वसामान्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं--

(१) लेखन में सर्वत्र एक ही नीति को नहीं अपनाया गया है । उदाहरण के लिए एक ही प्रति में एक ही शब्द भिन्न-भिन्न रूप में लिखित मिलता है । जैसे--

किधौं, किधों, कैधों, भांमनी, भांमिनी, मधि, मधि, भारथी, भारती, अच्छे आछे, पीय, पिय, इ० ।

(२) हस्तलिखित प्रतियों में 'ख' ध्वनि सर्वदा 'ष' संकेत द्वारा प्रकट कर ली गयी है, जब कि मुद्रित प्रति में उसे 'ख' वर्ण द्वारा ही सूचित किया गया है । जैसे--

मषतूल (क,ख)—मखतूल (ग)
सिषा (क,ख)—सिखा (ग)
रेष (क,ख)—रेख (ग)
सुष (क,ख)—सुख (ग)
दुष (क,ख)—दुख (ग)
मुष (क,ख)—मुख (ग)
षंजन (क,ख)—खंजन (ग)
पषानि (क,ख)—पखानि (ग)
देषबे कौ (क, ख)—देखबे कौ (ग)

(३) जैसा कि अन्यत्र कहा गया है, कुछ स्थानों पर जान-बूझकर शुद्ध या तत्सम शब्द रखने का प्रयत्न दिखाई देता है। ऐसा प्रायः मुद्रित 'ग' प्रति में अधिक मात्रा में हुआ है । जैसे—सात्विक (सातिग,) पद्मिनी (पोमनी,), पल्लव (पलव), मध्य (मधि), द्विज (दुज), कमल (कँवल), कज्जल (काजर), कटाक्ष (कटाछ), पिपीलिका (पपीलिका), ज्ञान (ग्यान), इ० ।

(४) कहीं-कहीं ह्रस्व स्वर को दीर्घ और दीर्घ को ह्रस्व करने की प्रवृत्ति दिखाई देती है । विशेष कर इ, उ स्वरों को क्रमशः ई, ऊ के रूप में प्रयुक्त किया गया है, या ई, ऊ को इ, उ के रूप में । जैसे—'पिय' के बदले 'पीय', 'बिछिया' के बदले 'बिछीया', 'स्वाति' के बदले 'स्वाती', 'नाभि' के बदले 'नाभी', 'नायिका' के बदले 'नाईका', 'ताही' के बदले 'ताहि', 'मीठी' के बदले 'मिठि', 'नाहीं' के बदले 'नाहिं', 'बिजुरी' के बदले 'बीजुरी' इ० ।

(५) अनुनासिकता और नासिक्य व्यंजन या स्वर (चन्द्रबिन्दु) दोनों के लिये प्रायः अनुस्वार का प्रयोग किया गया है। मुद्रित प्रति में नासिक्य व्यंजन या स्वर को चन्द्रबिंदु द्वारा प्रकट करने की ओर ध्यान अवश्य दिखाई देता है, किन्तु वहाँ भी सर्वत्र एक ही नीति को नहीं अपनाया गया है, कहीं-कहीं व्यंजन को अनुस्वार से भी प्रकट किया गया है । जैसे—

किधों (ग), पिंजर (क, ख), पीँजरा (ग), जिनमैं (क, ख), जिनमें (ग), अपांगन (क, ख) अपाँगन (ग), फंदबे कौ (क, ख), फाँदिबे को (ग), आनंदकारी (क, ख), आनँदकारी (ग), जंभात (क), जँभात (ग), भाँत (ख), भांति (ग), इ० ।

(६) हस्तलिखित प्रतियों में 'ज्ञ' ध्वनि को 'ग्य' सङ्केत द्वारा प्रकट किया गया है । जैसे—ग्यांनिनि के (ज्ञानिनी के); ग्यांन (ज्ञान), इ० ।

मुद्रित प्रति में, प्रवृत्ति तत्सम शब्दों के प्रयोग की होने के कारण वहाँ 'ज्ञ' ध्वनि को 'ज्ञ' संकेत द्वारा ही प्रकट किया गया है ।

(७) कहीं-कहीं पंक्तियों के क्रम में भी बदल पाया गया, जिसका उल्लेख पहले किया जा चुका है । हो सकता है कि छंद-पंक्ति का या क्रम-विपर्यय लिपिकर्ता की असावधानी के कारण निर्माण हुआ हो ।

(८) पाठभेद केवल एक या एकाधिक शब्दों तक ही सीमित न रहकर, एकाध स्थल पर पूरी पंक्ति या चरण ही भिन्न पाया गया है। इसके उदाहरण भी इसके पहले प्रस्तुत किये जा चुके हैं।

(९) सबसे विलक्षण विशेषता भाषा-सम्बन्धी पायी गयी। उदाहरण के लिए 'ख' प्रति में भाषा प्रायः अशुद्ध है; यही नहीं, उसमें कई शब्द अत्यन्त विकृत रूप में भी प्रयुक्त हुए हैं और उकार-बहुलता उसका वैशिष्ट्य है। मुद्रित प्रति 'ग' में तत्सम-प्रधानता है। मूल पाठ को भी स्यात् संस्कारित करके भाषा को शुद्ध करने का प्रयत्न इसी प्रति में परिलक्षित होता है। उदाहरण के लिए—'दुरद' के बदले 'द्विरद', 'प्रसंसी' के बदले 'प्रशंसी', 'सरसुती' के बदले 'सरस्वती', 'कँवल' के बदले 'कमल', 'प्रीत' के बदले 'प्रीति', 'चित' के बदले 'चित्त', 'भाग' के बदले 'भाग्य', इ० शब्दों का प्रयोग इसका प्रमाण है। मुद्रित प्रति में पाया जानेवाला भाषा का यह विशुद्ध रूप संभवतः संपादनकर्ता की कृपा का ही फल समझना चाहिए, लिपिकर्ता की नहीं। पुणें विद्यापीठ वाली प्रतियों में से (ख) प्रति में पाया जानेवाला अशुद्धियों का आधिक्य ध्यान में लेने पर ऐसा प्रतीत हुआ कि यह प्रति पाठ-निर्धारण के लिए अधिक विश्वसनीय नहीं है, यद्यपि उसका लिपिकाल प्राप्त प्रतियों में सबसे अधिक पुराना है। तुलनात्मक दृष्टि से पुणें विद्यापीठ वाली 'क' प्रति ही पाठ-निर्धारण के लिए ठीक प्रतीत हुई, क्योंकि उसमें लिपिकर्ता का प्रमाद या भाषा-संस्कार की प्रवृत्ति न्यून मात्रा में पायी गयी।

(१०) कहीं-कहीं सरल वर्णों को जोड़कर युक्ताक्षर के रूप में लिखने की प्रवत्ति पायी गयी है। उदाहरण के लिए—नृमल (निरमल), न्हान को (नहाने को), न्हाय करि (नहाकर), प्रमल (परिमल), इ०।

(११) कहीं-कहीं एक शब्द के पूर्वाक्षर पूर्व शब्द में और अन्त के अक्षर बाद वाले शब्द में चले गये हैं। छंद की दृष्टि से भी सदोषता लिपिकर्ताओं के ऐसे प्रमादों के कारण ही आ गयी है। जैसे—

पंछ रातैं सोहैं (पंछरा तैं सोहैं), मेच कबितान की (मेचक बितान की), धरत्रि गुन बपुत्रि भुवन (धर त्रिगुन बपु त्रिभुवन), हा सिरस (हासि रस), कामकेतु रंगन (काम के तुरंगन), काम केकि सारन की (काम के किसारन की), लछत रननन (लछ तरवनन), कलपत रोवर की (कलप तरोवर की), रूप पुरजिन के (रूपपुर जिनके), किलकन कौं नतेस हैं (किलकन कौंन ते सहैं), इ०।

ऊपर बतायी गयी विशेषताएँ प्राप्त सभी प्रतियों में न्यूनाधिक मात्रा में

पायी गयीं। अब आगे इन प्रतियों में से प्रत्येक में पायी जानेवाली विशेषताओं की ओर निर्देश किया गया है।

(क) और (ख) दोनों प्रतियाँ पुणें विद्यापीठ के जयकर ग्रंथालय की हैं। दोनों में लगभग समानता है। अतः दोनों की विशेषताओं को यहाँ एकत्रित रूप में ही ग्रथित किया गया है। तुलनात्मक दृष्टि से 'क' प्रति 'ख' प्रति की अपेक्षा अधिक शुद्ध है। ऊपर निर्दिष्ट सर्वसामान्य विशेषताओं के अतिरिक्त 'क' और 'ख' प्रतियों में निम्नांकित विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं—

(१) 'व' ध्वनि को बिन्दी के साथ 'ब' संकेत द्वारा प्रकट किया गया है। जैसे 'सेवै'।

(२) कई स्थानों पर ह्रस्व वर्णों को दीर्घ लिखा गया है। जैसे, मोहीयतु, (मोहियतु), जूवा (जुवा), कूंडी (कुंडी), हीयौ (हियौ), त्यागी (त्यागि), इ०।

(३) लिपिकर्ता के प्रमाद 'ख' प्रति में सबसे अधिक मात्रा में पाये गये, जिनके फलस्वरूप कई छंद सदोष बन गये हैं। उनमें आवश्यकता की अपेक्षा अधिक वर्ण, मात्राएँ या शब्द भी पाये गये। इन स्थलों का निर्देश अन्यत्र किया जा चुका है।

(४) 'ऋ' ध्वनि को 'र' ध्वनि द्वारा व्यक्त किया गया है। जैसे—'ग्रह' (गृह)।

(५) कई स्थानों पर अनुस्वार या चन्द्रबिन्दु को टाला गया है। जैसे—हैं, नासिका मै, तीनो, तामै, मनमै, हीय मै, किधौ, जामे, नाहि, षैच्यौ, षेच, कवल, बूंद, सिगार, इ०।

(६) कई छंदों में रिक्त स्थान पाये गये। उदाहरण के लिए 'क' प्रति में ४८वें छंद के दूसरे और तीसरे चरणों के कुछ अंश छूट गये हैं। उसी प्रकार 'क' प्रति में ४३वें छंद के प्रथम चरण के पाँच वर्ण छूट गये है, फलतः छंद सदोष हो गया है। ६४वें छंद का चौथा चरण (ख) प्रति में छूट गया है।

(७) 'ख' ध्वनि को सर्वत्र 'ष' संकेत द्वारा प्रकट किया गया है। जैसे—मषतूल, सुष, दुष, मुषकमल, षंजन, सिषा, रेष, माषन, इ०।

(८) प्रत्येक अनुनासिक वर्ण (विशेषतः न म) के पूर्वाक्षर पर अनुस्वार-चिह्न लिखा गया है। जैसे,—ग्रांम, स्यांम, घ्रांन, प्रांन, कांम, कांनन, जांनत, सुरभांन, मधुपांन, इ०।

(९) संस्कृत के तत्सम शब्दों में ह्रस्व इकार के बदले अकार का प्रयोग किया है। जैसे,—गत (गति), प्रीत (प्रीति), कीरत (कीर्ति), इ०।

(१०) अंतिम 'अ' स्वर के बदले 'उ' स्वर रखने की प्रवृत्ति। जैसे, दलि-

यतु (दलियत), मोहियतु (मोहियत), दोहियतु (दोहियत), रोहियतु (रोहियत), रुचिरु (रुचिर), परतु (परत), हरतु (हरत), करतु (करत), रंगरेजु (रंगरेज), अतनु (अतन), इ० ।

(ग) भारत जीवन प्रेस वाली मुद्रित प्रति :

इस प्रति की विशेषताएँ इस प्रकार हैं —

(१) कई स्थानों पर ह्रस्व वर्णों को दीर्घ और दीर्घ वर्णों को ह्रस्व लिखा गया है। जैसे, पींजरा (पिंजरा), नाभी (नाभि), तरुनि (तरुनी), हूतौ (हुतौ), इ० ।

(२) अंतिम 'अ' स्वर के बदले 'इ' स्वर रखने की प्रवृत्ति। जैसे, बिसारि (बिसार), हेरि (हेर), हरति (हरत), निदरति (निदरत), बिसरति (बिसरत), निरखि (निरख), इ० ।

(३) 'ख' ध्वनि को सर्वत्र 'ख' संकेत द्वारा प्रकट किया गया है। जैसे, मखतूल, सुख, दुख, रेखा, खंजन, खैंचत, मुखकमल, माखन, इ० ।

(४) तत्सम शब्दावली की बहुलता एवं ब्रजभाषा के शब्दों के बदले मूल संस्कृत (तत्सम) रूप लिखने की प्रवृत्ति इस प्रति की एक उल्लेखनीय विशेषता है। जैसे, सात्त्विक (सातिग), मध्य (मधि), दुज (द्विज), इ० ।

(५) 'ज्ञ' उच्चारण को 'ज्ञ' संकेत द्वारा प्रकट किया गया है। जैसे, ज्ञान, ज्ञानिनिके, इ० ।

(६) अनुनासिक व्यंजन को अनुस्वारयुक्त लिखने के बदले उसके परवर्ती वर्ण के साथ ङ, ञ, ण, न, म इ० के योग से युक्ताक्षर के रूप में लिखा गया है। जैसे बिम्ब (बिंब), कम्बु (कंबु), विपञ्ची (विपंची), कण्ठ (कंठ), रङ्गरेजु (रंगरेजु), तुङ्ग (तुंग), अन्धकार (अंधकार), बिन्दु (बिंदु), चन्द (चंद), श्रीखण्ड (श्रीखंड), सुगन्ध (सुगंध) इ० ।

(७) कई स्थानों पर पर्यायवाची शब्दों को रखा गया है। जैसे, भौंहें (भृकुटी), पैरत (तिरत), काज (कांम), मुखकमल (मुषपंकज), लोचनन (नैनन), पानिपल्लव (करपल्लव), इ० ।

इस प्रकार, मूल प्रति में संपादनकर्ताओं के द्वारा पर्याप्त संस्कार किये गये हैं। अतः जहाँ तक पाठ-निर्धारण का प्रश्न है, प्रस्तुत मुद्रित प्रति अधिक विश्वासार्ह नहीं मानी जा सकी, यद्यपि संदेह-स्थलों के निराकरण के लिए आवश्यकतानुरूप उनका उपयोग भी अवश्य किया गया है।

पाठ-निर्धारण-नीति :

उपलब्ध सभी प्रतियों के पाठों का मिलान करने के उपरांत पाठ-निर्धारण के लिए जो सिद्धान्त अपनाये गये हैं, वे निम्नानुसार हैं —

(१) सभी प्रतियों में समान रूप से मिलने वाले पाठ को असंदिग्धतया मूल पाठ के रूप में स्वीकृत किया गया है।

(२) स्वीकृत प्रतियों में से अधिक प्रतियों में मिलने वाले पाठ को प्रायः मूल पाठ के रूप में स्वीकार लिया गया है।

(३) जहाँ कहीं ऐसा पाठ मिला जो अधिकांश प्रतियों में तो समान है, किन्तु किसी एक विशिष्ट प्रति में भिन्न है और भिन्न होने पर भी वह अधिक सार्थक एवं शुद्ध प्रतीत हुआ, और अन्य प्रतियों में मिलनेवाला अर्थहीन एवं अशुद्ध, वहाँ अपवाद के तौर पर ही सही उक्त एक प्रति में मिलने वाले सार्थक एवं शुद्ध पाठ को ही स्वीकृत किया गया है और अन्य प्रतियों के अर्थ-हीन एवं अशुद्ध पाठ को अस्वीकृत।

(४) जब दो विभिन्न प्रतियों में भिन्न-भिन्न पाठ मिले, और दोनों शुद्ध प्रतीत हुए, तब कवि बलभद्र की भाषा-प्रवृत्ति, तत्कालीन भाषा का स्वरूप और अर्थ की दृष्टि से शब्दों की युक्तायुक्तता का विचार आदि देखकर ही पाठ निर्धारित किया गया है।

(५) हस्तलिखित पोथियों की प्रतिलिपि करते समय लिपिकर्ता द्वारा अनेक प्रकार की असावधानियाँ बरता जाना या प्रमाद होना संभव है। लिपि-कर्ता के प्रमादजन्य पाठभेदों को पद-टिप्पणी में नहीं दिया गया है।

(६) कहीं-कहीं इतने भिन्न पाठ प्राप्त होते हैं कि जितनी प्रतियाँ तुलना के लिए ली गयी हों, उनमें प्रत्येक प्रति का पाठ अलग-अलग होता है। फलतः पाठ-निर्धारण में कठिनाई उपस्थित हो जाती है। यह कठिनाई उस समय और भी बढ़ जाती है यदि कोई भी पाठ भाषा एवं अर्थ की दृष्टि से ठीक नहीं बैठता। ऐसी हालत में प्रतियों के पाठ को सर्वथैव अस्वीकृत कर कोई अन्य पाठ भी ग्रहण नहीं किया जा सकता। ऐसे स्थानों पर स्वीकृत प्रतियों में से ही किसी ऐसे पाठ को स्वीकार किया गया है जो अर्थ और रूप दोनों दृष्टियों से मूल के अधिक समीप का प्रतीत हुआ।

सिखनख

संकेत-सूची

'क' प्रति—पुणें विद्यापीठवाली प्रति — क्र०४३४/९

'ख' प्रति— ,, ,, (सटीक) — क्र०२२८१/१

[टीकाकार—चंद्रसेन मोहणोत]

'ग' प्रति—(मुद्रित)—भारत जीवन प्रेस, काशी (सन् १८९४ ई०)

'दे०'—देखिए

'सं०'—संस्कृत

'अ०'—अरबी

'फ़ा०'—फ़ारसी

विषयानुक्रम (अंगों का वर्णन-क्रम)

छंदानुक्रम	विषय	पृष्ठ
१.	कच बर्नन	४५
२.	पाटी बर्नन	४६
३.	बेनी ,,	४७
४.	माँग ,,	४७
५.	भाल ,,	४८
६.	कुंकुम की बेंदी बर्नन	४९
७.	भृकुटी बर्नन	५०
८.	पलक ,,	५०
९.	बरुनी ,,	५१
१०.	नेत्र तारिका बर्नन	५२
११.	नेत्र मध्य के लाल डोरा बर्नन	५३
१२.	नेत्र बर्नन	५३
१३.	काजर ,,	५४
१४.	सूधी चितौन बर्नन	५५
१५.	तिरछी ,, ,,	५६
१६.	नासिका ,,	५७
१७.	नासिका बेध ,,	५७
१८.	नथ बर्नन	५८
१९.	कपोल ,,	५९
२०.	कपोल गाड़ बर्नन	६०
२१.	कपोल को तिल ,,	६०
२२.	श्रवण बर्नन	६१
२३.	तरोना ,,	६२
२४.	अधर की गाड़ बर्नन	६३
२५.	अधर बर्नन	६३
२६.	दसन ,,	६४
२७.	रसना ,,	६५
२८.	बानी ,,	६६
२९.	हास्य ,,	६६
३०.	तंबोर ,,	६७
३१.	मुष सुगंध ,,	६८
३२.	चिबुक ,,	६८

छंदानुक्रम	विषय	पृष्ठ
३३.	चिबुक में स्याम चिह्न बर्नन	६९
३४.	मुख सुषमा बर्नन	७०
३५.	बोलत सुभाव ,,	७१
३६.	पोत मोत सरी ,,	७१
३७.	भुज ,,	७२
३८.	हथेरी ,,	७३
३९.	अँगुरी बर्नन	७४
४०.	महंदी रंग ,,	७४
४१.	मुक्तमाल रोमराजी बर्नन	७५
४२.	कुच बर्नन	७६
४३.	कुच अग्र की अरुनता बर्नन	७७
४४.	कुच अग्र के निकट की स्यामता बर्नन	७८
४५.	कुच संधि बर्नन	७८
४६.	अंगिया ,,	७९
४७.	रोमराजी ,,	८०
४८.	रोमराजी ,,	८१
४९.	त्रिबली ,,	८२
५०.	नाभि ,,	८२
५१.	कटि ,,	८३
५२.	मदनस्थान ,,	८४
५३.	जंघ ,,	८५
५४.	जंघ नितंब कटि बर्नन	८५
५५.	पींडरी बर्नन	८६
५६.	जेहरी ,,	८७
५७.	तिरोछा ,,	८८
५८.	जावक ,,	८८
५९.	बिछिया ,,	८९
६०.	नूपुर ,,	९०
६१.	पग के नष बर्नन	९०
६२.	गति ,,	९१
६३.	सुभाय सिंगार ,,	९२
६४.	सोरह सिंगार ,,	९३
६५.	बारह आभरन ,,	९४
६६.	देह ,,	९४
६७.	बय कलस ,,	९५

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ बलभद्र कृत सिख-नख लिख्यते ॥

अथ कच बर्नन

कवित्त

मरकत-सूत किधौं पन्नग के पूत, किधौं
राजत अद्‌भूत[1] तमराज कै से तार हैं।
मखतूल गुनग्राम सोभित सरस[2] स्याम,
काम-मृग-कानन कि कुहू के कुमार हैं॥
कोप की किरन[3] जल नील की जरी के[4] तंतु,
उपमा अनंत चारु चँवर[5] सिँगार हैं।
कारे सटकारे भीजे सौंधा सों[6] सुगंध[7]-बास,
'बलभद्र' ऐसे नव नबला के बार हैं[8]॥१॥

टीका— ॥ श्री गणेशाय नमः ॥ श्री राधाकृष्णाभ्यां नमः ॥
अथ कवि बलभक्त सिषनष ताकी टीका मोहणोत चंद्रसेन कृत लिष्यते।

दोहा :

वंदन जुगल किसोर पद, गनपति निज गुर वंद।
तातें सगुन पदार्थ सब, नीके लहियतु बंद॥१॥
मुरधर पुर जोधांन पति, अजितसिंह राठोर।
अभयसिंह ताके तनय, रविकुल मंडन मौर॥२॥
कृपा दृष्टि ताके सचिव, संवतसिंह महुनोत।
चंद्रसेन ताको सुत जु, दंपति भक्ति उदोत॥३॥
नीको कवि बलभद्र जिहिँ, सिषनष कियो प्रसिद्ध।
ताकी टीकावारता, सुगम करी विध विध॥४॥
सतरनिनांनू पोस सुदि, तेरस तिथ सुषकार।
वक्ता सुरता दुहून कै, मंगल मंगलवार॥५॥

पाठभेद—१. (ग) अभूत। २. (ख) सुरस। ३. (ग) किरिनि। ४. (ग) कैधों नील नलिनी के। ५. (ख) चमर। ६. (ग) सोंधे सो। ७. (ग) सरस। ८. (ग) ऐसे बलभद्र नवबाला तेरे बार हैं।

सिषनष प्रबंध । प्रथम केश वर्णन ।।

मरकत सो नील मनि ताको सूत सो तार है, कै पनग जे सर्प्प ताके पूत जे लरके है, कै तमराज जे अंधकार ताके तार से अदभूत राजत जे सोभत है। मखतूल जे स्याम रेसम ताकी गुन जे डोरी तिनको ग्राम जे समूह है, कै मदन जे कामदेव रूप म्रिग जे हरन ताकौ कांनन जे बन सोई स्याम जे कारो सरस जे अधिक सोभित है, कै कुहू जे अमावस ताके पुत्र हैं कोप जे सूर्य ताकी किरन जे मोघ है, कै जल की नील है देहरी दीपति अर्थ तें नीली जरी कै तांते है उपमा अनंत है ए सिंगार रस को चँवर चारु जै सुंदर है कारे सटकारे जे लांबे सौंधा सों भीजे सुगंध बासै हैं हे कवि ऐसें नव नबला जे नई नायका ताके बार जे केस ऐसे सोभायमान हैं।

अथ पाटी बर्नन

कवित्त

दरस दरस कौ परस होत 'बलभद्र',
किधौं है सरस साला सनि सुरभान की।
रितिराज[१]-पंछी[२] के से उभे पंछरा[३] तैं सोहै[४],
तान[५] बैठो छपाकर मेचक बितान की।।
तम कै पटल लपटाने हेमकूट सों कि,
सघन कादंबिनी कसोटी पंचबान की।
पाटी तेरी तरुनि जुगल ऐसी राजै मानौ,
जामी जुग जमुना सिखा रतन-खान की[६] ।।२।।

टीका—दरस दरस जे दोऊ अमावस तिन कौ परस जे मिलाप होत है, किधौं कवि कहै सनि जे सनीसर सुरभान जे राहु तिन दोऊंक सरस जे सुंदर साला है, कै रितिराज कै जे वसंत ताको पंछी जे कोकिल ताके उभे पंछरा सो दोयूं बाजू सोहै हैं, कै छिपाकर जे चंद्रमा सो मेचक जे अंधकार ताकी वितान जे रावटी तानि जे खड़ी करि बैठो है, कै तम जे अंधकार ताके पटल जे पहल हेमकूट जे सोना कौ टूंक तातें लपटाने हैं, कै सघन कादंबिनी जे छटा हैं, कै पंचबान कामदेव के ताकी कसौटी हैं मानौं रतनखान जे सुमेर तिनकी सिखा ऊपर जुग जे दोय जमुना जामी के जनम लियौ है। हे तरुनि तेरी दोऊ पाटी ऐसी राजित सोभित हैं।

पाठभेद—१. (ग) रसराज। २. (ग) पच्छी। ३. (ग) उभय पच्छ। ४. (ग) राजे कैधों। ५. (ग) छाँह। ६. (ग) रतनसानु की।

बेनी बर्नन

कवित्त

बैंनी[1] नव बाला की बनाय गुही 'बलभद्र',
कुसुम अरुन पाट मन मोहियतु है।
कारी सटकारी नीकी राजत नितंब नीचे,
पन्नग की नारिन की दुति[2] दोहियतु है।।
सातुग[3] सिताई असिताई तेज तामस की,
राजस रताई मिलि रूप रोहियतु है।
धरत त्रिगुन बपु त्रिभुवन जीतिबे कों,
मानौ महामाया कौ सरीर सोहियतु है।।३।।

टीका—कवि कहै नव बाला जे नई ही नायिका ताकी बैंनी जे चोरी बनायकै गुही जे गूँथी कुसम जे श्वेत फूल अरु अरुन पाट जे लाल रेसम संजुक्त ऐसी मन कौं मोहतु है, कारी नितंब के नीचे तांई पहुचै ऐसी सटकारी जे लांबी सो पनग जे सांप ताकी नारी सांपनि ताकी दुत जे सोभा ताहूँ कौं दुखदाई है। सातुग जे सतोगुन ताकी सिताई सेतता असिताई जे तामस जे तमोगुन ताके तेज की स्यामता, राजस जे रजोगुन ताकी ललाई तीनौं मिलि रूप कौं रोहियतु जे बढ़ावतु है मानू त्रिगुन जे तीनु गुन धरत त्रिभुवन जे तीनौं लोक जीतिबे कों महामाया जे तिनतें तीनुं गुन प्रगट भए ताकौ एव दुजे सरीर सोहत है ऐसी वैंनी सोभायमान है।

अथ माँग बर्नन

कवित्त

तम के बिपन मैं सरल पंथ सातिग कों,
किधौं नीलगिर पर गंगाजू की धार है।
किधौं बन-बारी बीच राजत रजत रेख,
किधौं[4] चंद कर अंधकार कौ प्रहार है।।

पाठभेद—१. (ग) बेनी। २. (ग) देह। ३. (ग) सात्विक। ४. (ग) कीनो।

मापत[1] सिँगार भूम[2] डोरी हासि रस[3] की, कि
'बलभद्र' कीरत की लीक सुकुमार है।
पय की असार घनसार की असार माँग,
अमृत की आपगा उपाई करतार है।।४।।

टीका—तम जे अंधकार ताके बिपन मैं जे वन मैं सातिग जे सतोगुन ताकों सरल जे पंथ सूधो है, कै नीलगिर जे सीस रूप नील पर्वत है ता ऊपर श्री गंगाजी की धार है, किधौं बन-बारी जे कसोटी ताके बीच रजत जे रूपौ ताकी रेख सोभत है, कै केसरूप अंधकार जेई रात ताकै काटबे कों मुखरूप चंद ताकी किरन है, कै हासि रस सेत है ताकी भूम जे पृथी मापत हैं, कै कवि कहै ए कीरत की सुकमार लीक हैं, पय जे दूध ताकी असार जे नदी है, कै घनसार जे कपूर ताकी असार जे धार हैं, कै अमृत की जैसी आपगा जे नदी श्री करतार उपाई ऐसी माँग सोभायमान है।

अथ भाल बर्नन

कवित्त

थापी विध जस की जनम भूमि ससिवत[4],
उपजत जहाँ सब सुकृत कौ जाल है।
तिलक-तरोवर की छाया सुख-तलप, कि[5]
रस कै अगारन कौ अजिर रसाल है।।
भाग कौ सौ बासन सुहाग कौ सौ आसन है,
मोहनी को सासन कर्‌यौ तें[6] बस लाल है।
काम के तुरंगन की धाप की धरन[7] यह,
किधौं 'बलभद्र' भोरी भामिनी कौ भाल है।।५।।

टीका—विध जे विधाता यह जस की जनम भूमि ठहराई जहाँ सब सुकृत जे पुन्य ताकौ जाल जे समूह उपजत है, कै तिलक रूप तरोवर जे वृक्ष ताकी

पाठभेद—१. (ग) नापत। २. (ग) भूमि। ३. (ग) हास्यरस। ४. (ख) सिसवत; (ग) सस्यवती। ५. (ग) सुखतल्प कैधों। ६. (ग) कियो तें। ७. (ग) धरनि।

छाया की सुख-तलप जे सुख सज्या है, कै रसन के अगार जे घर के रसाल जे आबौ अजिर जे आँगनौ है, कै भाग जे नसीब ताकौ बासन है, कै सुहाग कौ आसन सोहै, कै मोहनी कौ सासन कहतां ताँबापत्र है तातें लाल जे श्रीकृष्ण कौं बस करै है, कै कामदेवरूप घोरा ताके छाप जे दौरबे की धरन है, कवि कहै भामनी जे नई नायिका ताकी भाल जे ललाट ऐसी सोभायमान है।

अथ कुंकुम की बेंदी बर्नन

कवित्त

बपु बछ[1] सो लगायो भायो[2] गुरुबंधु जानि,
भुवसुत भेटत कि उडुप नरिंदु[3] है।
किधौं रवि-सारथी कुरंग-रथ सारथी भौ
किधौं निज नारि उर पर धरे इंदु है[4]॥
सोतनि कौ गरब दहबे कों[5] दहन-कन,
'बलभद्र' सब सुख दैन दुखनिंदु है।
राग पीय मन कौ पराग मुखपंकज कौ,
भामनी के गोरे भाल[6] बंदन कौ बिंदु है॥६॥

टीका—गुरुबंधु जे बडौ भाई तिहि बछ जे लरकौ सो भायौ जे सुहावौ जांनिकै बपु जे सरीर सौं लगायो हैं, कै उड़ जे तारे तिनौं कों नरिंदु जे चंद्रमा जिहि भुवसुत जे पृथी को सुत मंगन ताकौ भेटौ है। ह्यां मुख उज्जल सोई चंद है बेंदी लाल सोई मंगल है, किधौं रवि सारथी जे सूर्य के रथकौं सारथी अरुन सो चंद्रमा कौ मृगरथ है ताकौ सारथी भयौ। त्यां मुखरूप चंद्रमा नेत्ररूप हिरन उपमा संभव हैं, कै इंदु जे चंद्रमा तिहिं निज नारि जे आपकी स्त्री उर पर धरी है सो इंदुवधु ममोला को कहै है तातें यह उपमा लई है। सोतनि कौ गरब दहबै कों जे जारबे कों दहनकन जे आग को कन हैं, कै सब सुख को दैनवारो दुख को निवारनवारो पदार्थ है, प्रीय कै मन की राग जे प्रीत है, कै मुखरूप पंकज जे कँवल ताकौ पराग जे सोरंभ है भामनी के गोरे भाल पर बंदन जे कुंकुम ताकी बेंदी सोभायमान है।

पाठभेद—१. (ग) वच्छ। २. (ग) भयो। ३. (क); (ख) निरंद। ४. (ग) लिये उर पर इन्दु है। ५. (क) दहवे है; (ग) दहिबे को। ६. (ग) भाल कैधौं।

अथ भृकुटी बर्नन

कवित्त

सौरभ[१] सुगंध स्वास चंप-कली नासिका को,
किधौं अलि उरध तें आघ्रन करतु है।[२]*
किधौं मुखचंद धरे बाहन कुरंग कंध,
जूवा मरकतन कौ मनहि हरतु है॥
किधौं 'बलभद्र' भाल कंचन के भाजन में,
दीप जुग नैनन कों काजर परतु है।
भामिनी की भृकुटी कि[३] काम की कटारी मानौ,[४]
जिहिं[५] देखें सौतनि कों गरब गरतु है॥७॥

टीका—नासिका रूप चंपै की कली ताको स्वास सोई सुगंध ताकी सोरभ सो लपटै ताको अलि जे भवर उरध जे ऊंचै तै आघ्रन जै सूंघिबो करतु हैं, किधौं मुखरूप चंद्रमा तिहिं के नेत्ररूप कुरंग जे हिरन वाहन हैं ताके कांधे मरकत जे स्यांम मनि ताकौ जुवा जे जूवारो धर्‍यो है सो मन को हरतु है, किधौं कवि कहै हैं ए भालरूप कंचन को भाजन जे बासन हैं तामै नैनरूप जुग जे दोय दीये तिनको काजर परतु है, भामनी की भृकुटी सो मांनो कांमदेव की कटारी है जिहिं देखें सोतन को गरब गरतु है ऐसी भौ सोभायमान है।

अथ पलक बर्नन

कवित्त

पातरि[६] पूतरी पहिरे पवित्र पीत बास,[७]
किधौं ए[८] सकल सुख बासना कौ प्रान हैं।

पाठभेद—१. (क); (ख) सोरंभ। २. (ग) घ्रान को करत है। ३. (ग) भौहैं कैधों। ४. (ग) कमान सोहैं। ५. (ग) जिन्हें। ६. (ख) पातर; (ग) पातुर। ७. (ग) मानो धारे पीत बास कैधों। ८. (ग) यहई।

*नोट—यहाँ कवि श्री बलभद्र जी ने निम्नांकित कवि-रूढ़ि को झूठा साबित किया है—

'चंपा तुझ में तीन गुन रूप रंग अरु बास,
अवगुन तुझमें एक है भ्रमर न आवै पास॥'

पीय रूप पीबे[१] कौ अधर आछे 'बलभद्र',
सौतनि कों एक पल परत निद्रा न है।।[२]
खंजनन पिंजर कि कनक के संपुट हैं,
जिनमें बसत प्यारे प्रीतम कौ प्रान है।
काम तुला[३] पलाहै कि पलकि तेरे पोमनी,[४]
भया के कपाट हैं[५] कि तारिन के त्रान हैं।।८।।

टीका—पूतरी नैनन की सोई पातरि तहिं पवित्र पीत बास जे सिंगार की रचना में पलकै केसर सौ मंडित करै हैं ताते मांनो पीरे कपरे पवित्र पहरे हैं, कै ए सकल जे सबै सुख बासना जे सुवास ताकौ घ्रान जे समूह हैं पीय के रूप पीबे कौ ए आछे अधर हैं, कवि कहै सोतन को एक पल निद्रा नाहीं परत अजक रहत है। नेत्ररूप खंजन ताकौ पींजरा है कै व कि तुला जे तराजू तन के पला जे पालडे हैं कै भया जे लज्या ताके कपाट जे किवार हैं, हे पोमनी ज्ये पदमनी ऐसी तेरी पलकैं सोभायमान हैं।

अथ बरुनी बर्नन

कवित्त

काम के केदारन की आयस[६] की कीनी बारि,
सांडूल सघन कमलाकर के कूल के।
लोचन-अनत ह्वै कैं[७] रसना सहस चारु[८],
काजर की कोर जुग रसराज फूल कै।।
पलक अनंग करतलन के पलव हैं,
किधौं चित चोर हैं हजार भुजमूल के।
तरुनी की बरुनी बिराजै ऐसी 'बलभद्र',
मोहनी पखानि बाढे बोम मखतूल के[९]।।९।।

टीका—कामदेव कै रूपखेत तामें नेत्ररूप केदार जे क्यारी है ताके आयस जे रक्ष्या की बारि कीनी है, कै कमलाकर जे लक्ष्मी ताको नांम श्री जे सोभा

पाठभेद—१. (ख) पीयै। २. (ग) कल न निदान हैं। ३. (ग) जुला। ४. (ग) पद्मिनी। ५. (ग) लाज के कपाट कैधों। ६. (ग) आयसु। ७. (ग) है कि। ८. (ग) चारि। ९. (ग) मानो मोहनी पखानि बांटे घोर मखतूल के।

ताजी की कूल जे ह्यां नेत्ररूप घोरा है ताकी साडूल जे नीली धोब सघन जे सांघनी हैं दोउं लोचनरूप अनत जे सेसनाग हैं ताकी चारु ज सुंदर सहस जे हजार रसना जे जीभ हैं काजर की कोर समेत जुग जे दोऊं नेत्ररूप रसराज जे सिंगार रस ताके फूल तिनकी पंखुरियैं हैं अनंग जे कांमदेव सोई नेत्र ताकी पलकैं रूप करतल जे हथेरी ताकी पलव जै अंगुरियैं है, कै नेत्ररूप चितके चोर हजार भुजमूल के जे हजार हाथौं कर चित कौं चोरत है नेत्ररूप मोहनी ताकै फलकरूप वीकना ताके वोम जे डोरे वाढे से सोहै हैं कवि कहै तरुनी की बरुनी ऐसी विराजमांन है ॥

अथ नेत्र तारिका बर्नन

कवित्त

पयभरे भाजनन तिरत[१] मधुप मध्य,
किधौं छीरनिधि नीके मधि द्वीप कारे हैं।
बिसद बसन मधि[२] सौंधे की-सी बिंदु मानौं[३],
मुख देखिबे कों मैन दर्पन सँवारे हैं ॥
कमल[४] दलनि पर मनिमय देव मानौं,[५]
पीय मन दुज[६] पूजिबे[७] कों पर्य[८] धारे हैं।
छितिधर[९] छिति जीतिबे कों काम[१०] 'बलभद्र',
तम की तुरसी कि[११] तरुनी तेरे तारे हैं ॥१०॥

टीका—नेत्र सोई पय जे दूधभरे भाजन हैं ताके मधि ए तारिका रूप मधुप जे भँवर तिरत हैं, किधौं नेत्ररूप छीरनिधि जे खीरसमुद्र है ताके मधि कारे द्वीप जे स्याम छींर है पुनि उक्ति कारे दीवे जोए हैं, बिसद बसन जे नेत्र सोई उजल कपरे हैं ताके मधि सोंधे की बिंदु जे चोवा की बेंदी है, कै मानौ मैंन जो कामदेव तिहि मुख देखिबै कुं दर्प्पन सँवारे हैं, कमल दल जे कमल की पंखुरी ताके ऊपर मनि जे स्याम मनि तामई देवता सो सालम-

---

पाठभेद—१. (ग) भाजन में पैरत। २. (ग) बीच। ३. (ख) सौंधे किसी विध मानौं; (ग) सोंधे ही की बिन्दु कैधों। ४. (ख) कवल। ५. (ग) कैधों। ६. (ग) द्विज। ७. (ख) पूछबे। ८. (ग) पाय। ९. (ग) छितिपति। १०. (ग) जीतवे के काज। ११. (ख) तुरस कि; (ग) तरस कै।

रामजी सो पियके मनरूप दुजि जे ब्राह्मन जिहिँ पूजिबे कोँ पधराए हैँ, छिति-धर जे राजा कामदेव जिहिँ छिति जे पृथवी जीतिबे की तम जे अंधकार ताकी बुरसी जे ढाल है, कवि कहै हे तरुनि तेरे नेत्रों के तारे ऐसे सोभायमान हैँ।

अथ नेत्र मध्य के लाल डोरा बर्नन

कवित्त

पाटल नयन कोकनद कै से[1] दल दोऊ,
'बलभद्र' बासर[2] उनींदी देखी बाल मैँ।
सोभा के समुद्रन मेँ बडिवा[3] की आभा किधौँ,
देवधुनि भारती[4] सु मिली[5] पुन्य काल मेँ॥
काम-कैवर्त्त[6] किधौँ नासिका-उडुप[7] बैठो,
खेलन[8] सिकार तरुनी के मुख-ताल मेँ।
लोचन सितासित मेँ लोहित[9] लकीर मानौ,
बाँधे जुग मीन लाल रेसम के जाल मेँ॥११॥

टीका—पाटल जे रक्त स्वेत दोऊ नयन सो कोकनद जे रक्तकमल ताके दल जे पंखुरियाँ हैँ, कवि कहै मैँ बासर जे प्रभात कै समै बाल जे स्त्री उनींदी देखी है ताके नेत्ररूप सोभा के समुद्र मेँ बडिवानल जे अगनि की आभा जे सोमा है, कै देवधुनि जे श्री गङ्गाजी भारती जे सरस्वती दोऊ पुन्यकाल विषै सुमेर जे मिली है कामदेवरूप कैवर्त्त जे झीवर सो तरुनि के मुखरूप तलाव मैँ सिकार खेलन कुं नासिकारूप उडुप जे नवारो ताके ऊपर बैठो है, लोचना की सितासित जे सुपेदी स्याही ताके बीच हित जे प्रीत ताकै रंग लाल है ताही की मानो ए लाल लीक है, कै नैनरूप दोय मीन जे मछी सो लाल रेसम के जाल मैँ कामदेव रूप झींवर बांधी है ऐसे नेत्र मधि के लाल डोरे सोभायमान हैं।

अथ नेत्र बर्नन

कवित्त

परम प्रबीन मीनकेतन के मीन किधौँ,
सुख के सरोज हैँ फुलाए पीय-भान के।

पाठभेद—१. (ख) केसे। २. (ख) वासुर। ३. (ख) बड़वा; (ग) बाड़व। ४. (क) भारथी; (ख) मारिथी। ५. (ख) सुमर। ६. (ग) काम कई बर्ज। ७. (ख); (ग) उड़प। ८. (ग) खेलन। ९. (ख) सोहत।

सरद के खंजन मिले हैं मुखचंद कों कि,
जोरे हैं कुरंग रथ बाहन समान के।।
बाला तेरे नैन कि बिसाल सौतिन के साल,
'बलभद्र' साने[1] हैं सुहाग खुरसान[2] के।
मुनिन के मन उपजावत अनेक भाव,
मेरे जान एई[3] हैं बिधाता[4] पंच बान के।।१२।।*

टीका—ए नेत्र मीनकेतन जे कामदेव ताकी परम जे कदीम प्रबीन जे चतुर मीन जे मछी है, कै पीयरूप भान जे सूर्य ताके फुलाए सुख के सरोज जे कमल हैं, किधौं ए सरद रित के खंजन मुखरूप चन्द्रमा सौं मिले हैं, कै मुखरूप चन्द्रमा जिह ए निजरथ के वाहन मृगसमान जे बराबर कर जोरे हैं, हे बाला तेरे बिसाल जे बड़े नैन सो सुहाग रूप खुरसान के साने जे सँवारे ए सोतनि के साल हैं, कवि कहै मुनि जे मुनेश्वर तिनहूँ के मनकूँ अनेक भाव उपजावत हैं, तो मेरे जान कामदेव के पाँचबान हैं ताके विधाता जे बनावनवारे एही हैं याते बेड्धक नाहीं, ऐसे नेत्र सोभायमान हैं।

अथ काजर बर्नन

कवित्त

कचन के फंद परे खंजन तरफैं किधौं,
बाँधे जुग मीन नागपास सों मदन है।
काम के किसारन[5] की कूलन की कूपिका कि,
त्रायक[6] तिलक कि सिंगार के सदन हैं।।
बिसिख पुलिंद मैन माजे हैं प्रदीपन सों,
किधौं 'बलभद्र' मुनि मैन को कदन है।[7]

पाठभेद—१. (ग) सान। २. (ग) खरसान। ३. (ग) एही। ४. (ग) विसिख। ५. (ग) कसारन। ६. (ख) त्रायकि; (ग) त्रायुष। ७. (ग) बलभद्र मुनिन के मन के कदन है।

* 'क' और 'ख' प्रतियों में तीसरे और चौथे चरण में 'ग' प्रति की तुलना में क्रम-विपर्यय है, अर्थात् 'ग' प्रति का ३रा चरण 'क', 'ख' प्रतियों का ४था चरण है और 'ग' प्रति का ४था चरण 'क', 'ख' प्रतियों का ३रा चरण है। 'ग' प्रति का ४था चरण त्रुटिपूर्ण भी है, क्योंकि उसमें एक वर्ण कम है।

काजर[1] की कोर[2] अवरेखे लोचननि मानौ,
कीने चितचोरन के मेचक बदन है ॥१३॥

टीका—काजर सोई मानौं कचन के केस ताकै फंद मैं परे नेत्ररूप खंजन तरफे हैं, मदन के कामदेव जिहिं नेत्ररूप मीन जे मछरी सो काजर रूप नाग-पास जे सर्प्प की फासी तामे बाँधे हैं, कै कामदेव कै ए देहरूप किसार जे तलाव है ताकी नेत्ररूप कूपिका जे कुई है ताकी कुल जे जल की नीक हैं कै त्रायक तिलक जे दीठोनों है, कै ए कजर सोई मानों सिंगार कौ सदन जे घर हैं, कवि कहै मैन जो कामदेव सोई पुलिंद जे भील तिहिं नेत्ररूप विसिख जे बान तेई प्रदीप जे कजर रूप विसेषतासौं माँजे हैं, एई मुनि जे मुनेसुर ताकौं मैन जे कामदेवता ताके कदन जे काटनवारे एई हैं काजर की कोर नै ए नैन अवरेखे जे आँजे हैं, सो मानो ए चित के चोर हैं तातें इन नैनन के मेचक बदन जे मुख कारे किये हैं ऐसो काजर सोभायमान है।

अथ सूधी चितोन बर्नन

कवित्त

नैकु[3] ही निहारे नैन नवीन[4] सुकीया[5] नार,
मुनिन के मन मनसिज कौं तनौत है।
बिन ही कटाछि[6] काटे लाज के कवचन[7] कों,
काजर दिये तें कोटि काम के उदोत है॥
जोहैं[8] निर्विकार तौं[9] बिकार करैं औरन कों,
छाँडे क्यौं कुल सुभाव जैसो जाकौ गोत है।
बाँकी चितवन तें करैगी कहा 'बलभद्र'
सूधी चितवन हीं असाध साध[10] होत है ॥१४॥

टीका—नवीन जे नई सुकीया नार नैकु ही निहारै तातै मुनि जे मुनेसुर तिनऊं के मन मैं मनसिज जे कामदेव ताको तनोत बिसतार होत है, कटाछ बिन ही लाज के कवच जे बगतर ताकों काटे हैं पुंनि कजर दीए तें कामदेव के कोटिक उद्योत होत हैं, जो निर्विकार जे विकाररहित जौ हैं जे देखैं तोही

पाठभेद—१. (ग) कज्जल। २. (ग) रेख। ३. (ग) नेक। ४. (ग) नायिका। ५. (ग) स्वकीया। ६. (ख) किन ही कूंछाति; (ग) बिन ही कटाक्ष। ७. (ग) कौचन। ८. (ग) अहैं। ९. (ग) पै। १०. (ख); (ग) असाधु साधु।

ओरन कौं विकार करै हैं याते यह रीत है जाको जैसो गोत होत तैसो कुल को समाव छाँडै नाहीं, सो नेत्र की रीत परम्परा तें एही हैं, कवि कहैं सूधी चितवन हूँ ते असाध साध जे असमर्थ तैं सामर्थ करत हैं। तो बाँकी चितवन तें कहा जानै कहा करैंगी।

अथ तिरछी चितौन बर्नन

कवित्त

किधौं श्रुत मंडल[1] कुबेनी देख गतागत,
होत मीनकेतन के मीन सरकस हैं।
लछ[2] तरवनन[3] कौ छूटैं छंद चतुरनि,
बिसिख[4] बिसार राखे[5] काम करकस हैं॥
उज्जल सरल चक्र[6] चलत रयन[7] दिन,
अच्छ के[8] अपांगन के आछे तरकस हैं।
मित्रन कौ कहत सुख की बात 'बलभद्र',
पूछत[9] कि मंत्र मुनिन सों बरकस हैं॥१५॥*

टीका—श्रुतमंडल जे कान सोई कुबेनी जे मछधांनी ताकौं देख मीनकेतन जैं कामदेव ताके ए नेत्ररूप मीन जे मछ सो गतागत जे जावै आवै कौं सरकस जे समर्थ होत हैं कहै चतुर कामदेव रूप करकस जे सिकलीगर बान पुन देहरी दीपत तें विसेष जे विष तासौं बिसार जे लपेट राखे वेई कटाछि रूप बान तरवन जे कान कौ कुंडल रूप लखि जे निसानो है ताको छंद जो छछो हो छूटे है अच्छ जे आँखें सोई तरकस ताते अपांगन जे कटाछ रूप उजल बान रैन दिन चक्र से सरल सूधै चलत हैं, कवि कहै मानो ए कान इन कराछिन के मित्र हैं ताकौं सुख की बात कहत हैं, कै मुनि जे मुनेसुर तासौं बरकस जे अकस हैं तातें मित्रा सुं मंत्र जे सल्ला पूछत है।

पाठभेद—१. (ख) सुत मंडल। २. (ग) लच्छ। ३. (ग) तर बननिं। ४. (ग) विसिख। ५ (ग) पाथे। ६. (ग) बक्र। ७ (ग) रमन। ८ (ग) अच्छे के। ९ (ग) बूझत।

*ग प्रति में यह दूसरा चरण है, जब कि 'क' और 'ख' प्रति में चौथा। उसी प्रकार 'क' और 'ख' प्रति में जो दूसरा चरण है, वह 'ग' प्रति में तीसरा है और तीसरा चरण 'ग' प्रति में चौथा है।

अथ नासिका बर्नन

कवित्त

सोभा की सकेल ऊँची बेल बाँधी 'बलभद्र',
राख्यो[1] सम[2] लोचन कुरंगन को[3] रोस है।
दीपत कौ दीपग[4] कि मुखदीप[5] कौ सुमेर,
मृदु मुख-सारस कौ[6] साफाकंद[7] जोस है॥
कलप-तरोवर की कलिका सुगंध कली,[8]
उपमा अनूपन[9] कौ बिबिधि निसोस है।
तिल को[10] सुमन है कि नासिका तरुनि तेरी,
सुरन कौ सरना[10] कि सौरभ कौ कोस[11] है॥१६॥

टीका—ए नासिका मांनो सोई सोभा की सकेल जे कली ऊँची जे उठी हैं, कवि कहै लोचन रूप कुरंग जे हिरन हैं ताके आपस में रोस है ताको सम जे बराबर राखवै कुं बेल जे अडग बाँधी है, कै दीपत जे सोभा ताकौं दीपग जे दीवो है, कै मुखरूप दीप जे खंड है ताको सुमेर है, कै मुखरूप मृदु जे कोमल सारस जे कमल है ताकै बीच कौं साफा कंद जे गढ़ो है, कलप-तरोवर जे कलपविच्छ ताकी कलिका जे कली है, विविध जे भाँति भाँति की अनूप उपमा है पै याकै सम नाहीं, तिल को सुमन जे फूल हैं, कै सुरज देवता ताकौं सरनौं है, कै सौरभ जे सुगंध ताकौ कोस जे भंडार है, है तरुन तेरी नासिका ऐसी सोभायमान है।

नासिका बेध बर्नन

कवित्त

सोभा सुरसदन कौ बातायन 'बलभद्र',
किधौं[1] महामोहनी पपीलका कौ गेह है।

पाठभेद—१. (ख) राखी। २. (ख) सब। ३. (ख) सूं; (क) सो। ४. (ग) दीपति को दीपति। ५. (ग) मुखद्वीप। ६. (ग) की। ७. (ग) सिफाकंद। ८ (ग) कली कैधौं गंध फली। ९. (ग) अनूपम। १०. (ख) सुरन को सरिनां; (ग) सुरन की सरन। ११. (ख) कोट।

पैने पंचबान कौ छबीलो[1] छिद्र छाजत कि,
देखिबे कों देह में अदेह जू की देह है।।
पिय मन रोकबे कौं निगड़ किली कौ रंध्र,
सुख-मधुकर कौ सुषिर जासो नेह है।
मान कै[2] मेवास में धनुर्धर कौ मोरचा है,
किधौं बाम नासिका में[3] बेसर कौ बेह है।।१७।।

टीका—सूर जे देवता ताकौ सोभा रूप सदन जे घर ताकौ बातायन जे वावदान है, कवि कहै ए महामोहनी रूप पपीलका जे कीडी, ताकौ गेह जे घर है, पाँच बान कामदेव के सो पैनै जे तीखे हैं ताकौ ए छबीलौ छिद्र है, अदेह जे कामदेव ताकी देह है, पिय मन रोकबे कौं नासिका रूप बेड़ी है ताकी किली कौं रंध्र जे बोज है, कै सुखरूपी मधुकर जे भँवर है ताको सुषिर जे रहिबेकौं नेह जे प्यारो जासो जे छिद्र है मान कै मेवास है तामें धनुर्धर जे कामदेव ताकौ ए मोरचा है, ऐसो बाम नासिका में बेसर को बेह सोभायमान है।

नथ ब्रनन यथा

कवित्त

नैन नटवान के निकसबे कौं[4] कुंडरी कि,
पारस त्रदस कि चरन चंद रथ कौ।
किधौं 'बलभद्र' कीनौ[5] सुंदरी सुहाग जानी,
जात रूप कुंड पीय मन के सपथ कौं।।
किधौं जगजीत काम[6] दीनौ है कि तोहि बाम,
कामदेव चकवै कि[7] चक्र निज[8] हथ कौ।
नीकी नासापुट नीको नथ नाई किधौं[9] नाह,
चित फंदबे कौं[10] फंद रोप्यो मनमथ कौ।।१८।।

पाठभेद—१. (ग) छबीली। २. मैन के। ३. (ग) पै। ४. (ग) नटवा केंधौं निकरिबे की कुंडली। ५. (ख) किधौं। ६. (ग) जग जीतिबे को। ७. (ग) चक्क ह्वै के। ८. (ग) आप। ९. (ग) नायिका की। १०. (ग) फाँदिबे को।

टीका—नैनरूप नटवान के निकसबे कौं कुंडरी है कै पारस जे रिषीसुर तीनौं की मंडली है कै मुखरूप चंद ताकै रथ कौ चरन जे पईयो है, कवि कहै सुंदरी सुहागन जिहिं पिय कौ आबौ जानि पंथ मैं जातरूप जे सोनौं ताकौ कुंड कीनै है, किधौं कामदेवरूप चकवै जे चक्रजत जिहिं जगत जीतबे कौं निज हाथ को चक्र सो हे नाईका तोहि दीनो है, हे पटु जे हे चतुर नीकी नासा पै नीकी नथ नाई सो पहरी जे मानौं नाह के चित फंदबे कौ मनमथ जे कामदेव ताको फंद रोप्यो है।

अथ कपोल बर्नन

कवित्त

सुषमा भरत भरे पेम ही कि साचैं ढरे,[1]
सुधा सों सुधार धरे[2] दर्पन[3] सुदेस हैं।
आभा की निकाई है केदार[4] किधौं क्रांतिन के[5],
तीनौपुर रूपपुर जिनके नरेस हैं॥
रपटत लोचन चिलक देख 'बलभद्र',
झलकनि चौंधे किलकन कौन ते सहैं।[6]
गोरे गंड मंडल अखंड जोतवंत तेरे,
छबि के छपाकर कि दुनि के[7] दिनेस हैं॥१९॥

टीका—सुषमा जे सोभा ताही कै भरत सौं भरे है, कै प्रेम ही के साचे ढरे है, कै सुधा जे अमृत तासौं सुधार धरे ऐसे सुदेस जे भले दर्प्पन हैं, किधौं ए सोभा की निकाई है ताकी क्रांत के केदार जे क्यारे है, कै तीनुं लोक मैं जई रूपपुर है तिनके ए नरेस हैं, कवि कहै याकी चिलक देख लोचन रपटत हैं ठहरत नाहीं, झलकनी की चौंध जे चोकाचोकी धी तामै पुनि किलकन जे हास सो कोन सहि सके है, किधौं छबि के छपाकर चंद्रमा है, कै दुनि के दिनेस जे सूर्य है, हे स्त्री तेरे गंडमंडल जे कपोल गोल सो अखंड जोतवंत ऐसे सोभायमान है।

पाठभेद—१. (ग) कैधों प्रेम साँचे ढारे। २. (ख) सुधारा धरे; (ग) सुधारि धरे। ३. (क); (ख) दरपन। ४. (ख) किदार; (ग) केदार। ५. (ख) क्रांतन के; (ग) काँतिन के। ६. (ग) क्यों बतेस है। ७. (ग) दुति के।

अथ कपोल गाड बर्नन

कवित्त

भँवरी[1] परत जल जोबन के जोर किधौं,
जामें छबि डूबत[2] सकल प्रभुदान[3] की।
निकस सके[4] न बल[5] करि हारे 'बलभद्र',
नैन नाग नायबे कौं खोदी[6] बिध बान[7] की।
उदित नवीन होत रचित भरत मानौ,[8]
रूप कौ निबान किधौं कूंडी सुखदान की।
पिय मन पारद अटकबे की गाड़ किधौं,
गंड मंडलनि गाड़ मंद मुसकान की॥२०॥

टीका—जोबन रूप जल कै जोर तै ए भँवरी परत है तामैं सकल प्रभुदान जे सब स्त्री नीनौ की छबि डूबत है, कवि कहै किधौं नैनरूप नाग जे हाथी ताकौ नवायबै कुं बिध जे ब्रह्मा ताके बान की खोदी ए ओदी जै खाई हैं तामैं परे है ते बल कर हारे पै निकस नाहीं सकै हैं, किधौं रूप कौ निबान है सुखदान जे सुखरूप जल ताकी भरत जे भरबै की कूँडी रची है सो उदित जे देखे ते नवीन होत है, किधौं पीय के मनरूप पारद ताके अटकबे की गाड़ है कै गंडमंडल जे कपोल गोल है तामैं ए मुसकान की मंदु जे मधुरता है ऐसी कपोल की गाड़ सोभायमान है।

अथ कपोल को तिल बर्नन

कवित्त

किधौं चतुरानन[9] चितेरे चित्र कीनो तबै[10],
लाग गयो लेखन कौ डंक चित लोल को।
कनक-रसा में रसराज कौ निलय मानौ,[11]
मुकर में अनुप्रत बस्यौ[12] तम तोल को॥

पाठभेद—१. (ग) भँवर। २ (ग) बूड़त। ३. (ग) प्रमदान। ४ (ग) निकरि सकै। ५. (क) बेल। ६ (ख) बोधी; (ग) ओदी। ७ (ग) विधि बान। ८ (ग) रचित भरत मानो। ९. (ख) चुतरानन। १०. (ग) करि लीनो। ११. (ग) कैधौं। १२. (ग) अनुप्रतिबिम्ब।

परी ससि मंडल में ताकी छाँह[1] छूटत न,
'बलभद्र' लील सुरभान बाफ बोल को।
मनु भर भयौ[2] नेह नैनन निहार[3] नाह,
ऐसौ[4] नेहवंत तिल तिय के कपोल को॥२१॥

टीका—चतुरानन जे ब्रह्मा सोई मांनो चितेरो है जिहिं नायकारूप चित्र जे चित्रा म कीनौं तबैं चित लोल जे चित चंचल भयो, तातें यह लेखन को डंक लाग्यो है, किधौं कनक-रसा जे कपोलरूप सोनै की पृथी है तामें रसराज जे सिंगार रस ताकौ निलय जे घर है, कै कपोलरूप मुकर जे दर्प्पन है तामै तम जे अंधकार ता कै तोलवैकुं वाट अनुप्रत जे छोटो सो बस्यो जे रह्यो है, कवि कहै सुरमनि जे राहु सो लील जे स्याम है ताको बोल जे मुख ताकी बाफ की छाँह ससिमंडल जे मुखरूप जे चंद्रमा को मंडल तामै परी सो छूटत नाहीं है, मानुं नाह कै नैन नेहवंत है सो नेह करकै निहारबैकुं भर भयो जे एकाग्र ह्वै बहर रहै है हे तीय तेरै कपोल को तिल ऐसो सोभायमान है।

श्रवन बर्नन यथा

कवित्त

रूप के अपायन[5] मै राखी है धजा उतार,
काम सार जंत्र के[6] कि कंचन के पोत हैं[7]।
पीय के बचन स्वाति बूंदन की सीप जुग[8],
सुनत ही मोद मुकताफल[9] तनोत हैं।
लोचन कुरंगन कों कीनी है परख धार[9],
'बलभद्र' झांकन झपन[10] लोल होत हैं।
सुख के सुषिर[11] हैं श्रवन तेरे सुंदरी कि,
दरी है सुहाग राग सागर के सोत हैं[12]॥२२॥

पाठभेद—१. (ग) तम छाँह। २. (ग) मार भर्यो। ३. (ख) नैन तें निहार; (ग) नैननि निहारि। ४. (ग) ऐसी। ५. (ग) अमापन; (क) अपायात। ६. (ग) सारी काम जंत्र की। ७. (ग) कैधों। ८. (ग) मुकुताहल। ९. (ग) परिख धर। १०. (ग) झांकत झपत। ११. (क) सिषर; (ग) सुखिर। १२. (ग) स्रोत हैं।

टीका—रूप के अपायन जे मुकाम तामैं यह श्रवणरूप धजा उतार जे ठहराय राखी है, कै कामदेव को जंत्र सो ह्यां मुखरूप बीन है ताकी यह सारे है, कै कंचन के पोत जे जिहाज हैं, किधौं पीय के बचन रूप स्वात बूंद यह ताकी सीपे हैं यामैं बचन सुनत ही मोद जे आनंदरूप मुकताफलन को तनोत जे विस्तार होत है। किधौं कवि कहै ए लोचनरूप कुरंग लोल जे चपल होत हैं ताके झाँकन झपन देखेखि बैकुं पाछे फिरबैकुं परख धार जे खाई की धार कीनी है याते निकस जाते नर है, किधौं ए सुख के सुषीर जे छिद्र है, कै सुहाग जी दरी है गुफा है, कै राग सागर जे अनुराग ताके स्रोत जे झरना है, हे सुंदरी तेरे श्रवन ऐसे सोभायमान हैं।

अथ तरोना बर्नन

कवित्त

जटत जराय जगमगत सहस कर,
'बलभद्र' बृष[1] की कुमारिका के भान हैं।
धरत त्रधार है अपार तीखै नैनन कौ,
बर वे[2] अनंग आन रोप्यो खुरसान[3] हैं॥
उपमा न आन प्रान रंजन[4] बिहारी बर,
सत[5] तांडव के ताल[6] जानत सुजान हैं।[7]
चंद रथ चरन कि काम चक्क वै कौ चक्र,
किधौं तीय तरल तरौंना तेरे कान हैं॥२३॥

टीका—कवि कहै ए जराय जटत तरौंना सो मानो वृष की कुमारिका जे वृष की संक्रांत ताके भान जे सूर्य से सहसकिरना कीरि जगमगे है, किधौं अनंग जे कामदेव सोई मानौं बर वें जे सिकलीगर तिहि नेंन रूप त्रिधार जे बान सो अपार तीखे धरत जे करबै कूं खुरसान आन रोप्यो है, याको आन उपमा नाहीं प्रान रंजन विहारी बर सो तांडव जे नृत ना मै सुजान है सति जे निकौ जानत है ए उनके नृत के ताल है, किधौं मुखरूप चंद्र के रथ कौ चरन

पाठभेद—१. (क) विष। २. (ग) तेरे ये। ३. (ग) खरसान। ४. (ग) मनरंजन। ५. (ग) रति। ६. (ग) तार। ७. (ग) जिन्हें जानत जहान है।

है, कै कामदेव चक्कवै राजा कौ चक्र है, हे तीय तेरे काना तरोंना जे कुंडल तरल जे चंचल ऐसौ सोभायमान है ।

अथ अधर की गाड बर्नन

कवित्त

किधौं मुख दुजराज तर्पन को भाजन है,
किधौं पीय तर्पन कचोरा पय प्रान[1] कौ।
तापस[2] सरूप ताकी तपस्या कौ तपकुंड[3],
सोभा कौं सलिल कुंड सुरन के न्हान को ।।
जातरूप किंदरा[4] कि सुंदरी सरन ताकी,
'बलभद्र' थिर ह्वै बस्यौ है अरिथान[5] कौं ।।
तेरे तीय अधर ऊरध की पनारी मधि,
मानौ पीय लोचन पयालो[6] मधुपान कौ ।।२४।।

टीका—मुखरूप दूजराज जे चंद्रमा है ताके तर्पन को भाजन है, कै पीय के अधर अमृत प्रान जे पीबै कुं तर्पन जे ताँबै को पवित्र कचोरा है, किधौ रसरूप सोई मानौ तापस जे तपसी है ताकी तपस्या कौं तपकुंड जे अग्नकुंड रक्तवरन है, कै सुर जे साँस ताके न्हायबै कुं सोभा को सलिल जे जल ताको कुंड है, किधौं कवि कहै ए जातरूप जे सोनो ताकी किंदरा जे गुफा है एई सुंदरी की सरनागत है, पुनि मानौ थान जे सिवस्थान ताकौ अरि सोई कामदेव ह्याँ थिर ह्वै बस्यो है, किधौं पिया के लोचन ताके मधुपान को जे अधरामृत पीबै कौं अधर की पनारी जे लब ताके अधर जे उपर के मधि ए पयालो हैं, हे तीय तेरे अधर की गाड़ ऐसी सोभायमान है ।

अथ अधर बर्नन

कवित्त

डाभ के से चीरे होठ अलप सुरेख अति,
सुंदर सुरंग इंदु-नारि कौं[7] सौ तन हैं।

पाठभेद—१. (ग) पयदान। २. (ग) तामस। ३. (ग) तमकुंड। ४. (ग) कंदरा। ५. (ग) अरिस्थान। ६. (ग) पियाला। ७. (ग) इन्दुबधू को।

मधुर मधुर रस नारंग फल की फाँक[1],
धरी है सुधार सुध सुधा कौ सदन है।।
सुघर[2] सु पक्व बिंब लीनैं सुक चंद गोद,
किधौं 'बलभद्र' महामोहनी कौ धन है।
बंधुजीव विद्रुम अनार कलिका के दल,
तेरे अधरन की अरुनता कौ अनु है।।२५।।

टीका—ए होठ डाभ के चीर से अलप रेखा सहित अति सुरंग ऐसे सुंदर हैं सो मानौ इंदुनारि जे इंदुवधू ममोला ता को तन है, किधौं मधुर मधुर रस जे मीठा मीठा रस सहित नारंग फल की फाँक सुधार धरी है, कै सुधा के अमृत ताकौ सदन जे घर है, किधौं मुखरूप चंद जिहिं पाक बिंब जे अधर रूप पाकी गोह्नी सहित नासिका रूप शुक कौं गोदलीनो है, कवि कहै हे चतुर किधौं ए महा मोहनी को धन है, बंधुजीव जे दुपहरीया को फूल है पुन बिद्रुम जे मुंगीया है पुन अनारकलिका के दल जे पंखुरीये हैं सोई हे नायका तेरे अधरन की अरुनता कौ अनु जे अंस हैं ऐसे अधर सोभायमान हैं ।।

अथ दसन बर्नन

कवित्त

किधौं कुंद कलिका की अवली अनूप किधौं,
बानी की बिपंची की सुधार धरी सार है।
सुसा[3] के सदन ससि-सिसु आए सोभा काज[4],
किधौं मुख बारिज में बारिज की बार है ।।
झलकत रुचिर बतीस बज्र 'बलभद्र',
चमकत चारु बिजुरी की उनिहार[5] है।
अमृत के कन तपधन[6] के बिमल तन,
तेरे ए रदन चंद-बदन मझार हैं ।।२६।।

पाठभेद—१. (ग) सुफल फाँक। २. (ग) सुंदर। ३. (ग) ससि। ४. (क) ससि सु आए सोभा के काज। ५. (ग) अनुहार। ६. (ग) तपोधन।

टीका—कुंद जे मचकौंद ताकी कलिका जे कली ताकी अनूप अबली जे पाँत है, कै बानी जे सरस्वती ताकी बिपंची जे बीन ताकी दसनारूप ए सारै सुधार धरी है, किधौं रसना सोई सुसा जे बहन ताके सदन जे घर तिहाँ मुखरूप ससि ताके सिसु जे बालक सोभा के काज आए हैं, कै मुखरूप वारज जे कमल ता मैं बारिज जे मोती ताकी बार है, किधौं वज्र जे हीरा तिन जैसें ए सुन्दर बतीसुं झलकत है, कै बिजुरी के उनिहार ए मनोहर चमकत हैं, किधौं अमृत के कन हैं, कै तपधन जे तपस्वी तिन के विमल तन हैं, हे नायका तेरे चंदरूप बदन मझार ए दंत ऐसै सोभायमान हैं।

अथ रसना बर्नन

कवित्त

कमल बदन मधि कमला के काज रचि,
राखी है कमल-दल तलप सँवारी है।
किधौं 'बलभद्र' षटतंतन[1] की लिपि[2] यह,
किधौं षटस्वादन परखनि हारी है॥
ललित तँबोर[3] रंग सुगुन[4] कसौटी मानौं[5],
मंत्रन की मूरी परमारथ की प्यारी है।
रसिक[6] रसीली प्यारी तेरी मृदु रसना कि,
पद-रहसन कौ[7] रसा आनंदकारी है॥२७॥

टीका—कमल रूप बदन है ताके मधि कमला जे लछमी ताके काज कमल-दल जे पंखुरी ताकी तलप जे सेझ सँवार कै रचि राखी है, ए षट तंतन की लिपि जे षटसासन को पुस्तक है, कै ए षटस्वादन की परखनि हारी है, किधौं ए तंबोल को रंग ललित जे मनोहर ता सहित सुगुन जो भले गुन ताकी कसौटी है, कै मंत्रन की मूरी सोई परमारथ की प्यारी है, किधौं पद-रहसन की रसा जे काव्यग्रन्थन के अर्थ की पृथ्वी आनंदकारी है, हे रसिक रसीली प्यारी तेरी मृदु रसना जे कोमल जीभ ऐसी सोभायमान है।

पाठभेद—१. (ग) तंत्रन। २. (ख) लिप। ३. (ग) तमोर। ४. (ग) गुन गन की। ५. (ग) कैधौं। ६. (गं) रसिक। ७. (ग) पद्रहो रसन की।

बानी बरनन

कवित्त

बिमल बरन की है[1] किधौं ए[2] पुहुप दाम,
आकर अरथन की[3] आलय मयूख[4] है।
दर्पक[5] - दुरेफ ही की पंखन की सुरधुनि,
सुरन की माधुरी की मधुर पियूख[6] है॥
पीय मन साधिबे कौ अनहद धुनि यह,
'बलभद्र' जिँहिँ सुनि भूलै नीँद-भूख है।
प्रेमरस सानी सुख की निधानी तेरी बानी,
रागनि की रसना रसन ही की उख है॥२८॥

टीका—ए बानी पुहुप दाम जे फूल माला है, कै बिमल बरन जे न्रिमल अछर तिनके अर्थन कौ आलय जे घर तिनकी आकर जे खान ताकी मयूख जे किरन है, किधौं दर्प्प जे अनंगरूप दुरेफ जे भँवर है ताकी पंखन की सुर जैसो कि ताकी धुनि है कै सुरन की माधुरी जे मधुरताई ताको मधुर पियूख जे मीठो अमृत है, किधौं पीय के मन साधबै कौ यह अनहद धुनि है, कवि कहै जिहिं सुनि कै नींद भूख भले है किधौं प्रेमरस सौ सानी जे लपेटी यै सुख की निधान है; कै सब रागरागिनी की रसना है, कै रस की ऊख जे रसकौं साग है, हे नायका तेरी बानी ऐसी सोभायमान है।

अथ हास्य बर्नन

कवित्त

किधौं दुजराजन की[7] तपस्या[8] कौ तेज यह[9],
किधौं रसना के अग्र[10] कीरत कौ भास है।
'बलभद्र' ताहि की तरंग सुचि[11] देखियत,
छबि सुर-आपगा कौं आनन मैं बास है॥

पाठभेद—१. (ग) यह। २. (ग) है। ३. (ग) अरथ कैधौं। ४. (ग) पियूख। ५. (ख) दर्पकि। ६. (ग) मयूष। ७. (ख) दूजिराजन की; (ग) द्विजराज को। ८. (ग) तपोबल। ९. (ग) अहै। १०. (ग) आगे। ११. (ग) सुभ।

सुरन की जोत सुरगुरु की मरीचका[1] जू,
बीचका चित सु[2] चतुराई कौ प्रकास है।
पीय कौ कपट परिपात न कों चंद्रहास,
सुख के सुमन कि किसोरी तेरो[3] हास्य है॥२९॥

टीका—दुजराज जे मुखरूप चंद्रमा ताकी तपस्या को यह तेज है, कै रसना कै अग्र कीरत कौ भास जे कीरत की सोभा है, किधौं कवि कहै सुर आपगा जे श्री गंगाजी ताकी सुचि तरंगैं जे उजल लहरैं ताकी छबिकौं आनन जे मुख तामैं बास हैं, किधौं यह सुरन की जोत है, कै मुखरूप सुरगुरु जे बृहस्पत ताकी मरीचका जे किरन है, कै चित की चतुराई ताकी बीचका जे तरंग ताकौ यह प्रकास है, किधौं पिय के कपट परिपातन जे काटिबैकौं यह चन्द्रहास जे खडग है, कै सुख के सुमन जे फूल है, हे किसोरी तेरो हास्य ऐसौ सोभायमान है।

अथ तंबोर बर्नन

कवित्त

किधौं अनुराग राग राजस[4] कौ रूप निज[5]
किधौं मुखपंकज[6]-पराग दुज न्हाए हैं।
तन तरुनाई कौ अरुन-उदो[7] सु दुति, श्री
जू के ग्रह श्रीखंड के कुसुम बिछाए हैं॥
सोभा हू ते सोहियतु देखे मन मोहियतु,
तीनो लोक नारिन निरख नैन नाए हैं।
तेरे तीय अधर तंबोर[8] की रचन[9] मानौ,
'बलभद्र' बानी ये[10] बसन पहिराए हैं॥३०॥

टीका—ए अनुराग कौ फूल है, कै मुखरूप पंकज जे कमल ताकौ पराग है तामै दुज जे दंत न्हाए हैं, किधौं तन की तरुनताई ताकी अरुनता के उदै की दुति है, कै श्री लछिमीजी ताके घर श्रीखंड जे चंदन ताके कुसुम जे फूल बिछा रहै, ए सोभा हूँ तैं अधिक सोहत देखै तैं मनु मोहतु है, तीनौं लोककि

पाठभेद—१. (ख) मिरिचका। २. (ग) बीचिकान बीच। ३. (ग) कृसोदरी को। ४. (ख) रागनि। ५. (ख) सुमनि जु। ६. (ग) मुखकमल। ७. (ग) अरुनता उदोत। ८. (ग) बदन तमोर। ९. (ग) रुचि राची। १०. (ग) को।

नारै ते देखैं कैं नैन नवाए जे नीचे कीए हैं, किधौं कवि कहै ए बानी जो वसन जे रक्त कपरे पहराए हैं, हे तीय तेरे अधरन पै तंबोर की रचना ऐसी सोभायमान है।

अथ मुष सुगंध बर्नन

कवित्त

पूर परमला[१] मलयाचल उरोजन की,
निजु निरहारी है पदमपद[२] पान कौ।
धन धन-तापन[३] है गंधकली नासिका कौ,
अधिक अमोद रद कुंद कलिकान कौ॥
धूप ते अनूप आवै बोलत बदन बाफ,[४]
'बलभद्र' दवंति[५] मधुप सुखदान कौ।
सौंधे भीजी भारती[६] गुलाब के प्रस्वेद कन,
तेरी देहि[७] दीपति सुगंधन की खान कौ॥३१॥

टीका—उरोज जे कुचरूप मलयाचल पर्वत ताकौ पूर परमला जे पूरण सुगंध है, कै निजु जे आप नायका ताके पान जे हाथ ताकौं पदमपद जे कँवल की पदवी है ताकी निहारी जे सुगंध है, किधौं धनतापन जे तपस्वी ताकौ ए धन है, नासिका रूप गंधकली जे चंपै की कली, पुनि रद जे दंतरूप कुंदकली जे मचकुंद की कली ताहूँ तै अधिक सुगंध है, कवि कहै दवंती जे नायका सुख-दैन है ताके बोल कै बदन की बाफ मधुप जे भवरन कौं धूप जे अष्टगंध तातें अनूप आवै हैं, किधौं भारती जे बानी सो गुलाब के प्रस्वेद कन जे अतर तासौं भीजी हैं, हे नायका तेरी देह सुगंधन की खान सी सोभायमान है।

अथ चिबुक बर्नन

कवित्त

कनक बरन कोकनद के बरन और,
झलकत झाँई तामै बसनि[८] रदन की।

पाठभेद—१ (ग) पूरि परिमल। २. (ग) कमलपद। ३. (ग) धुनिजत पुन्य। ४. (ग) बास। ५. (ग) दयित। ६. (ख) भारथी। ७. (ग) तेरो मुख। ८. (ग) बसन।

कीनी चतुरानन चतुवाँ[1] रचि पचि करि,
अलप सी चौकी चारु आसन मदन की॥
अंग लसै वाकौ उपमान की अवधि सब,
सु मिल सुपान मानौ श्रीय के सदन की।
सुंदर सुढार है चिबुक नव नायका की,
किधौं 'बलभद्र' पातसाही[2] है बदन की॥३२॥

टीका—कनक बरन पुन कोकनद जे कमल ताके बरन है पुनि तामें बसिन अधर अरु रदन जे दंत ताकी झाँई झलकत है, किधौं चतुरानन जे ब्रह्मा जिहि पचि कर मदन के आसन कौं अलप सी चौकी चतुवाँ जे चतुराई सुं रचि जे रचि कै चारु जे सुंदर कीनी है, किधौं श्री लछिमीजी ताकौ सदन जे घर ताकी सु मिल सु पान जे चाहीयै जैसी पैंडी है वाकौ अंग सब उपमान की अवधि लसै जे सोभै है, किधौं बदन जे मुख ताकी ए पातसाही है, कवि कहै नवि नायिका की चिबुक ऐसी सुंदर सुढ़ार सोभायमान है।

अथ चिबुक मैं स्याम चिन्ह बर्नन

कवित्त

चंद के चरन पर उपज्यौ[3] तनक तम,
किधौं तमगुन ही कौ तन अति छीनो[4] है।
लाग रह्यौ लोभ मकरंद लागि[5] 'बलभद्र',
सारस मधुप कौ कि मन हरि लीनो है॥
मानौ[6] कलधौत पीठ बैठो रसनायक सों,
किधौं पीय नैनन[7] परम सुख दीनो है।
काम रंगरेजु बाँध्यौ चूनरी कौ चिह्न एक,
किधौं तीय चतुर चिबुक चिन्ह कीन्हौ है॥३३॥

टीका—मुखरूप चंद के चरन पर तनक सौ तम जे अंधकार उपज्यो है, कै तमोगुन के तन अति छीनौ जे अति सुछम है, कवि कहै मुखरूप सारस जे

पाठभेद—१. (ग) चतुर। २. (ग) बादसाही। ३. (ग) उपद्यो। ४. (ग) दीनो। ५. (ग) काज। ६. (ग) कैधौं। ७. (ग) पी के लोचनन को।

कँवल ताके मकरंद के लोभ की लाग जे चाहि, मधुप जे भँवर लाग रह्यौ है, कै देहरी दीपति अर्थ तें मधुप कौ मन हरि लीनो है, किधौं कलधौत जे कंचन ताकौ पीठ जे सिंघासन ताके ऊपर रसनायक जे सिंगार रस बैठो है, कै पीय कै नैनन को परम जे अधिक सुख दीनौ तातें नैन एकाग्र ह्वै ह्यां रहे हैं, किधौं कामदेव जोई रंगरेज ह्वै कै चूनरी को एक चिन्ह बाँध्यो है, हे चतुर तिय तें चिबुक को चिह्न कीनौ सो ऐसो सोभायमान है।

अथ मुष सुषमा बर्नन

कवित्त

पानिप[१] मदन कौ[२] बदन झलकत अति,
रूप की तरंग तामें प्रान तानियतु है।
जोबन की जोत जगमगत प्रभा सी[३] मानौ,
अजिर उदोत ताको[४], उर आनियतु है॥
मुकुर तें अमल बनायो है बिधाता बिधि[५],
'बलभद्र' यह अनुमान मानियतु है।
मेरे जान[६] झाँई झलकी है[७] तेरे आनन की,
ताही के उजारे[८] जग जोन्ह जानियतु है॥३४॥

टीका—ए मदन की पानिप जे सुंदरताई सो बदन पर झलकत है, कै रूप की तरंग है तामैं प्रान तानीयतु है, किधौं जोबनरूप घर ताकौ मानूं मुखरूप अजिर जे आँगनो ताकी प्रभा जे सोभा ताकी उदोत की जोत जगमगत है; ऐसी उपमै आनीयै है उरमें कवि कहै बिधाता बिधि कर जे जुगत करिकै बनायो है यातें याको अनुमान मुकर जे दर्प्पन ताहू तें अमल जे नृमल मानीयतु है, हे नायका मेरे जान तेरे मुखरूप चंद्रमा की झाँई झलकी जाकी जोन्ह जो चाँदनी है ताकी उज्यारे तें ए जगत जान्यौ परतु है, ऐसी मुख की सुषमा सोभायमान है।

पाठभेद—१. (क) पांनप। २ (ग) को। ३ (ग) प्रभा की। ४. (क); (ख) ताकी। ५ (ग) बिधु। ६. (ख) जानै। ७. (ग) झलकत। ८. (ग) ताही को उजेरो।

अथ बोलत सुभाव बर्नन

कवित्त

आनन की ओप कहिबे के काज 'बलभद्र',
कवि कोर उपमा न मन में बसत है।[१]
जोई भाव देखत अघात नहिं नैनन कों[२],
सोई भाव पीतम के हीय में[३] बसत है।।
गोरो बटुरारो तीय सुंदर बदन तेरो,
बोलत जँभात[४] मुसकात उलसत है।
मित्र की किरन परसत कोकनद मानौ,
खिन ही बिकच होत[५] खिन बिकसत है।।३५।।

टीका—कवि कहै आनन की ओप कहिबे कै काज कविसुरी कै मन मैं कोटेक उपमा बसतु है, जोई भाव देखत सोई भाव पीय के हिय मैं बसतु है, पै नैन देखबैकुँ अघात नाहीं है, हे नायका तेरो बदन गोरो अरु बटुरारो जे गोल अति सुंदर सो बोलत जँभात जे अलसत पुनः मुसकात है पुनः उलसतु है, सो मानो मुखरूप जे कोकनद जे कमल सो मित्र की किरन जे सूर्य की किरन पुनः देहरी दीपत तें अर्थ मित्र जे पिय ताके कर जे हाथ ताके परसन तें खिन ही में विकच जे मुदित होत है खिन ही में प्रफुलित होत है, ऐसो बोलत सुभाय करि मुख सोभायमान है।

अथ पोत मोतसरी बर्नन

कवित्त

त्रिभुवन रूप की त्रिरेखा तीनो मोहनी की,
सुरनर नागछबि करनि निकंद की।
झलकति मोतिसिरी[६] सोभा लोल गोल ग्रीव,
किधौं है बिराजत किरन मुखचंद की।।

पाठभेद—१. (ग) करिबे को उपमा न मन में कसत है। २. (ग) नैन नेक। ३. (ग) मन मैं। ४. (ख) जंभार। ५. (ग) छिनक मुदित होत। ६. (ग) मोती सिरी।

'बलभद्र' काम के कलंबन को फोँक किधौँ,
कंठ कंठसरी राजै कलिका जंबुद की।[1]*
पोत कलि मेचक दुलरी दुति दमकत,
मानौ असु[2] हंस की लसति दुति[3] मंद की॥३६॥

टीका—त्रिभुवन जे तीनौं लोक ताकौ रूप ताकी तीनों मोहनी है, कै सुर जे देवांगना नारि जे नायका नागि जे नागकन्या इन तीनौं की छबि निकंद जे दूर करबैकूँ ए त्रिरेखा जे तीनौं रेखा है, कवि कहै गोल ग्रीव पै मोतसरी की सोभा लोल जे चंचल झलकत है सो मानु ऐ रूपचंद्रमा की किरन है विराजित सोभित है, कंठ पै कंठसरी ऐसी राजै है सो मानौ कामदेव कौ कलंब जे मुख ताकी फूंक है, कै जंबुद जे सोनो ताकी कलिका जे कली ए है, पोत जे चीठको छलौ मेचक जे स्याम है पुनि दुलरी के संग कलि जे मनोहर दुति दमकत है सो मानौ हंस जे सूर्ज ताकी असु जे किरन ताको मंद की ऐसी लसत है, ऐसी कंठपोत अरु मोतसरी सोभायमान है।

अथ भुज बर्नन

कवित्त

तन तरवर की उभय साखा 'बलभद्र'
सुंदर सुढ़ार अति गोल समतूल हैँ।
साँचे भरि धरे[4] बिधि दामनी के दोऊ टूक,
दमकति दुति नाहिँ दुरति दुकूल हैँ॥
सुख के सरोवर[5] के पोखे हैँ मृनाल मानौ,
फूले कर अग्र कोकनद के से फूल हैँ।
कामकंद[6] हेरे भारे[7] कुंदन कनक दंड,
किधौँ भोरी भामनी के गोरे भुजमूल हैँ॥३७॥

पाठभेद—१. (ग) कम्बु कण्ठ राजत कलीका अनुबन्द की। २. (ग) अंस। ३. (ग) संग। ४. (ग) ढारे। ५. (ख) सूष की सरोवरी। ६. (ग) काम-कुंद। ७. (ग) भाये।

*यह चरण 'ग' प्रति में चौथा है, जब कि 'क' और 'ख' प्रतियों में तीसरा।

टीका—कवि कहै तनरूप तरोवर जे बृच्छ ताकी ए उभै साखा है, सो अति सुंदर सुढ़ार, गोल, समतूल है, किधौं बिधि जे ब्रह्मा जिहिं ए दामिनी के दोऊ टूक साँचे भरि धरे हैं या की दुति दमकति है सो दुकूल जे कपरे तातें दुरत नाहीं है, किधौं सुख की सरोवरी जे नदी वाके पोखे ए मृनाल जे कमलनाल हैं याके अग्र जे कर जे हाथ सो मानूं कोकनद जे कमल ताके फूल से फूले हैं, किधौं कामदेवरूप कुंदन जेवरादि जिहिं हेरे निघै करिकै कनक जे दंड कूंद जे मनोहर भारे जे सुधारे है भोरी भामनी जे नई नायिका तिहिं के गोरे भुजमूल ऐसे सोभायमान हैं।

अथ हथेरी बर्नन

कवित्त

सुंदर छबीली प्यारी तेरे करतल ए तो,
लए[1] हैं बिचित्र बिधि कमल[2] सुलेख सों।
कंचन से दरसत माखन से परसत,
भरी है[3] सुहाग सुभ भाग ही की रेख सों॥
बंचत[4] रयन दिन नाह के नयन बुध,
'बलभद्र' निमिष न लागत निमेष सों।
कामकलिका सी[5] पेम नेम नीके बेध पंथ,
रूप केरि पायक मिले है मानौ बेष सों॥३८॥

टीका—हे सुन्दर छबीली प्यारी तेरे करतल जे हथेरी सो मानुं बिचित्र जे चतुर बिधि जिहिं ए कमल सौ सुलेख जे लीख के लए हैं तातें ए ऐसी ही सुरंग है ए दरसने दरसै तै कंचन-सी है, सुभ जे भले सुहाग भाग ही की रेख तासों भरी है, कवि कहै नाहके नयन रूप बुध जे पंडित है ताकौं ए रयन दिन वंचित जे ठगत हैं तातें निमिष जे पलक हूँ निमेष जे पलकै लागत नाहीं, ए हथेरी नेम जे निच्छै कामकलिका जे कामदेव की कली ताकी पेम जे पंखुरी सी हैं तामें वेध जे रेखे नीकी लागत है सो मानौ रूप केरि पायक जे लसकर जे पंथ जे वेष जे लवाजमा सौं मिले हैं, ऐसी हथेरी सोभायमान है।

पाठभेद—१. (ग) लिखे। २. (ग) लेखनी। ३. (ग) भरे हैं। ४. (ख) वचत। ५. (ग) कमल कली ज्यों। ६. (ग) प्रेम नेम के मधुप थिर पिय के अपायत मिले हैं आछे बेष सों।

अथ अँगुरी बर्नन

कवित्त

फूले मधुमाधवी[१] के पुहुप परन किधौं[२],
'बलभद्र' पंचसाखा देवतरु की।[३]
केसर कली सी कलधौत की फली सी किधौं,
फूली भली भाँति कूल लता[४] कामसर की।।
कोमल अमल[५] अग्र दस चक्र चिन्ह राजैं,
जीत दसों दिसा किधौं सोभा सुर नर की।[६]
तेरे तन[७] बसत तनक तनु धर तंत्र[८],
किधौं करपल्लवी किसोरी[९] तेरे कर की।।३९।।

टीका—कवि कहै मधु जे देहरूप वसंत तामें हाथरूप माधवी जे मालती ताके पुहुप जे फूल फूले हैं ताकी ए परन जे पंखुरी एहैं, कै देवतरु जे देहरूप कलप-वृक्ष ताकी पंचसाखा है किधौं केसर सी कली सी ही, कै कलधोत जो सोनो ताकी फली है, कै देहरूप कामसर जे कामदेव ताकौ तलाव है ताकौ कर रूप कूल जे धोरा है ताकी ए वेल भली भाँति कर फूली है, इन अँगुरीयाँ के अग्र दस चक्र के चिह्न राजैं हैं सो मानौं दसौं दिसा के सुर नर तिन की सोभा जीती है, किधौं हे किसोरी तंत्र जे वसीकरन मंत्र सो तनक जे छोटो सो तन धार कै तेरे तन में यों वस्यो है, ऐसी कर की अंगुरीयें सोभायमान है।

अथ महंदी रंग बर्नन

कवित्त

कमला ज्यूं आलय लिपा ए[१०] कासमीर सो कि,
मेहँदी[११] करन किधौं[१२] दीनी[१३] मृगनैनी है।

पाठभेद—१. (ग) मधुमाधुरी। २. (ग) परन बिन मानो। ३. (ख) देव रें तरकी। ४. (ग) कुंच लता। ५. (ग) कमल। ६. (ग) दसहू दिसा की जीति शोभा सुरनर की। ७. (ग) कर। ८. (ख) धन तंत्र; (ग) धरितंत्र। ९. (क) कीसोरी; (ख) किधौं सोरी। १०. (ग) कमला को आँगन लिपायो। ११. (क) महदी; (ख) महिंदी। १२. (ग) मानो। १३. (ग) दीनो।

मुद्रिका जराव की पहिरी करपल्लव[1] कि
हसत नछित्र नवग्रह न की गैनी[2] है।।
मोतिन के गजरा कनक छिति पर मानौ,
बसी उडुगनन की पाँत सुख चैनी[3] है।
पुँहचीनि राजत बलय 'बलभद्र' मानौ,
कमल के नालिनि सिलीमुख की सेनी है।।४०।।

टीका—मृगनैनी नायका तिहि कर जे हाथ कमल रूप है तके मेहँदी दीनी है सो मानौ कमला जू श्री लछिमीजी सो कासमीर जे केसर तासौं आपके आपके आलय जे घर लिपाए है पुनि करपलव जे हाथ की अँगुरी ये हैं तिहिँ विषै नवग्रह रूप नवरतन के जराव की जरी मुद्रिका पहिरी है, तातैं मानौं हाथ सोई हसत नछित्र है, तामैं ए अंगुरी सो नव ग्रहन की गैनी जे भूमि है, पुनि मोतन के गजरा है सो मानौ कर रूप कनक छिति जे सोने की पृथ्वी है ताके ऊपर उड़गन जे तारो कै समूह ताकी पाँत जे सुख चैन करि कै बसी है, कवि कहै पुनि बलय जे चूड़ी पुनि पुँहची सो नवरत्न की होय है सो मानौ एक रूप कमल है ताकी नाल पर सिलीमुख जे रंग रंगि के भँवरे तिनौं की सेनी जे पाँत है मेहँदी मुद्रिका गजरे पुहँची ऐसी सोभायमान है।

अथ मुक्तमाल रोमराजी बर्नन

कवित्त

लाल गुन मुकता सुरसरी सरसुती[4] सी,
बीच रोमराजी सूरसुता सुख देनी है।
भए सुद्ध[5] न्हाय कै लोचन[6] हरिराय जू के,
'बलभद्र' सकल कलुषन[7] की छेनी है।।
रसपति हास किधौं अनुराग रासि किधौं[8],
पदमासदन मुख पदमनिसेनी है।[9]

पाठभेद—१. (ग) लगाई पानि पल्लव। २. (ग) श्रेनी। ३. (ग) सुखदेनी। ४. (ग) सरस्वती। ५. (ख) सुधी। ६. (ग) न्हाय करि नैन। ७. (ग) कैधों बलभद्र सब दुखन की। ८. (ग) अनुराग रस रासि किधौं। ९. (ख) पदमासन मुष जे पदमनिसैनी है; (ग) पदमा पदम मुख सदन निसेनी है।

रज तम सातिग[1] त्रिरेखा है हिरदैनी की[2],
किधौं तीय तेरे उर त्रिबिधि त्रिबेनी है ।।४१।।

टीका—मुकता जे मोती तिनकी माला है सो मोती सो तो मानौ सुरसरी जे श्री गंगाजी अरु लाल गुन जे लाल डोरे हैं सो मानौ सरस्वती नदी है ताके बीच रोमावल स्याम रंग है सो मानौ सूरसुता जे जमुना है सो सुखदेनी है, कवि कहै हरिराय जे श्रीकृष्णजू ताके लोचन या त्रिबेनी में न्हाय कै सुद्ध जे पवित्र भये हैं अनि नायकान सुँ दिष्ट जोरिबौ सोई मानौ कलुष जे पाप ताकी छीनी जे काटनवारी हैं, किधौं रसपति जे सिंगार रस ताको रंग स्याम है सो तो ए रोमराजी है पुनि हास्य रस सेत है सो मानो मोती है पुनि अनुराग को रंग लाल है सोइ तीनौं को रासि जे मिलाप है, कै पदमा जे श्री सोई सोभा ताको ए देहरूप सदन जे घर है ताके मुख जे बारने पदमनिसैनी जे कमलनी की नीसरनी है कमलिनी सनाल होइ तहाँ तीनौं रंग होत है, किधौं रज तम सातिग जे रजोगुन तमोगुन सतोगुन ए तीनों गुन ताकी ए त्रिरेखा तीनौं रेखा है हे तीय तेरे उर रोमावली है सो लाल डोरा मुक्तामाल सहित ऐसी सोभायमान है ।

अथ कुच बर्नन

कवित्त

मंगल कलस मकरंद भरे 'बलभद्र',
किधौं सम दुंदुभी सहोदर समर के।
किधौं रहे सांकि सूरसुता की सरन सोच,
चकवा के सावक सताए ससिकर के।।
मैन के मेवास[3] मन मोहिबे को मोदक कि[4],
बिमल सुफल[5] है कि फल सोभा-तरु के।
ओपी[6] पीन पोमनी[7] पयोधर कि ओपै आछै[8],
ऐपन सों माँड़े[9] आरे[10] पीय धौरहर के ।।४२।।

पाठभेद—१. (ग) रज तम सत्त्व की । २. (क) हरिदे नी की; (ग) हिरदै मैं नीकी । ३. (ग) मवासे । ४. (ख) व । ५ (ग) श्रीफल । ६. (ग) ओपे । ७. (ग) पद्मनी । ८ (ग) ओप आछी । ९. (ग) माँजे । १०. (ग) आछे ।

टीका—कवि कहै ए मंगलीक कलस मकरंद भरे हैं, कै समर जे कामदेवता के सहोदर जे दोय दुंदुभी जे नगारे बराबर हैं, किधौं चकवा के सावक जे बालक सो ससिकर जे मुखरूप चंद्रमा की किरण ताके सताए जे डर पाए सोचि जे सकुचि कैं रोमावल रूप सूरसुता जे यमुना ताके सरनि संकि जे डरपकै रहै हैं, किधौं मैन के मेवास हैं, कै मन मोहिबै कौ मोदक है, कै देहरूप सोभतरु जे सोभा को वृच्छ हैं ताके सुफल जे सुंदर बिमल जे नृमल फल हैं, किधौं पीन पोमनी जे कठोर कमलनी है पुन पयोधर ओपै जे घर है ताके आरे जे बार नैं ऐंपन सौं मांडे हैं, ऐंपन को रंग पीत रक्त हैं ऐसे कुच सोभायमान हैं।

अथ कुच अग्र की अरुनता बर्नन

कवित्त

किधौं उदयाचल उदोत[1] राजो[2] जोबन कौ,
किधौं अस्तवत[3] सिसुताई भान गति है।
अंतर की राग किधौं बाहिर प्रगट भई,
किधौं मुख राग की झलक झलकत है॥
बंदन के बंदन गयंद कुंभ कीने किधौं[4],
उभै भाल[5] राजे मानो सिव की सगति है।
किधौं 'बलभद्र' जामै[6] मूल द्वै[7] सजीवन के,
ऐसी कुच अग्र की अरुनता लगति[8] है॥४३॥

टीका—कुचरूप उदयाचल पर्वत है ताकै ऊपर जोबन जे पूर्णमासी ताको राजा जे चंद्रमा को उदोत जे उगतो है, कै भान जे सूर्य ताकी सिसुताई बाल्यावस्था तिहिं समै को अस्तवत जे उगबौ आथेबौ तिहिकी ए गति है। किधौं अंतर की राग जे प्रीत एही या पर बारैं आय प्रगट भई है। कै मुखराग जे ताँबौ ताकी ए झाँई झलकत है, किधौं ए कुचरूप गयंद कुंभ जे हाथी कुंभाचल है ताके ऊपर बंदन जे सिंदूर ताकी बंदन जे बेंदी दीनी है, कै कुचरूप

पाठभेद—१ (ग) उरोज। २. (ग) राका। ३. (ग) अथवत। ४. (ग) कैधों चन्द बदनी के बदन गयन्द कुम्भ कैधों। ५. (ग) भास। ६. (ग) जामी। ७ (ग) है। ८. (ग) लसति।

उमै जे दोय सिव हैं, किधौं ए सजीवन के द्वै मूल जे दोय जड़ी जामे जे जनमे हैं, कुचअग्र की अरुनता ऐसी सोभायमान है ।

अथ कुच अग्र के निकट की स्यामता बर्नन

कवित्त

अवली अलिन नलिनिनि की कोरिका किधौं,[1]
अमी कुंभ[2] अनँग अछून छाप दीनी है।
किधौं सेतकंठ[3] कंठ राजति गरल दुति,
कनक गिरन मनि मंजरी नवीनी है ।।
सिसुताई[4] तनुता तन कि तव धर सम,
तामस की रीत तै तरुन तेज कीनी है।
स्यामा के अनूप कुच अग्रन की स्यामताई,
किधौं 'बलभद्र' रसराज रूप छीनी है ।।४४।।

टीका—अलि जे भँवरे ताकी अवली जे पाँति है, कै नलिनी जे कमलनी ताकी कोरिका जे कलियै हैं, किधौं अनंग जे कामदेव जिहिं ए कुचरूप अमीकुंभ जे अमृत के कलस हैं सो अछून जे न छेड़न कूं छाप दीनी है, किधौं सेतकंठ जे कुचरूप सदासिव हैं ताकै कंठ पैं गरल जे विष ताकी दुति राजति हैं, कै कनक गिर जे कुचरूप सोना के पर्वत हैं ताके मनि जे नील मनि ताकी मंजरी जे कलीयै नवीनी जे नीपजी हैं, किधौं तरुन जे जोवन ताके तेज के सम जे संमै तामस जे तमोगुन सौहै नायका तव जे तेरे तन जे कुच तिहिं विपैरीत जे जुगत धार कैं सिसुताई जे लरकाई की, तनुता जै देह कीनी हैं, किधौं रसराज जे सिंगार रस ताकौ रूप छीनो जे थोरौ सोहै ।

अथ कुचसंधि बर्नन

कवित्त

तेरे इन जुगल उरोजन की संधि किधौं,
'जमल' कुलाचलन ही कों संसरनु है।

पाठभेद—१. (ग) अवलंबी अलिन नलिनहीं की कोरिका कै । २. (ग) अमी कुंभ ऊपर । ३. (ग) सितकंठ । ४. (ग) सिसुता की ।

रहे[1] तहाँ रतिईस पुलिंद[2] रयन दिन,
बिसिख सबिष पान पहुपा को धनु है ॥[3]
भूले चित रोक कैं[4] पै हरी सुद्धि बुद्धि सब,
अति ही अनीत[5] तहाँ नायक अतनु है।
आयो[6] हुतौ मित्रहिं मिलन काज[7] 'बलभद्र',
आवन न पायो सु अटक राख्यो[8] मनु है ॥४५॥

टीका—['जमल'=जमल नाम दोनु कुच। 'कुलाचल' नाम पर्वत। 'संसरन' नाम बीच को पंथ। 'पुलिंद' नाम भील]

हे नायका तेरे इन जुगल उरोजन की संधि है सो मानौ जमल जे दोऊ कुचरूप कुलाचल जे पर्वत हैं तिनकौ ए संसरन जे बीच कौ पंथ है। तहाँ रतिईस जे कामदेव सोई मानौं पुलिंद जे भील रैन दिन रहै हैं। वाके पान जे हाथ ता विषै धनुष हैं पुनि पुहुपा जे फूल ताकौं विसष जे बान हैं सो अनीत्त हैं जिहि नायक के चित्त कौ भुलाय हूँ रोकि कैं सुधि बुधि सब रही हैं। कवि कहै नायक कौ मन सो नायका के मनरूप मित कौ मिलन काज आयौ हौ सो आवन न पायौ ह्याँही अटकाय राख्यो हैं, ऐसी कुचसंधि सोभायमान है।

अथ अंगिया बर्नन

कवित्त

किधौं सिसुताई के पयाने के सिमाने[9] ताने,
सुंदर सुढार पट कुटिका है लाज की।
कोकसाला रूप की कि काम ही की सेज किधौं,[10]
'बलभद्र' कोमल कुलह काम बाज[11] की ॥
मोहनी कौ जाल, उछल्यो कि[12] अमी कुंभनि कौ,
डारी है अँधेरी कि जोबन-गजराज की।

पाठभेद—१. (ग) बसे। २. (ग) पुरंदर। ३. (ख) सविष पान पहुपा कौ धनु हैं; (ग) सविष विसिष पानि पुहुप को धन है। ४. (ग) लूट्यो चितचोर कैधों। ५. (ग) अनीति। ६. (ग) गयो। ७. (ग) मिलावन को। ८. (ग) रह्यो। ९. (ग) सामियाने। १०. (ग) सुखसाला। ११. (ग) काम-काज। १२. (ग) जाल की उछाल।

गोरे गोल कुचन पै[१] बनी[२] नील कंचुकी कि,
　　पहिरी सिलह रति रन के समाज की ॥४६॥

टीका—ए पट जे वस्त्र ताकी सुंदर सुढार कंचुकी है सो मानौ सिसुताई जे लरकाई ताके पयाने के सिमाने जे डेरे खड़े कीये हैं, कै ए लाज की कुटिका जे रावटी हैं, कवि कहै कुचरूप कोक जे चकवे हैं तिनकी ए साला जे घर है, कै कामदेव की सेज है, कै कुच सोई कामदेवरूप बाज हैं, ताकी ए कोमल कुलह है, किधौं कुचरूप अमीकुंभ है ताकौ जल मोहनी कौ उछल्यो है, कै जोबनरूप गजराज है ताकै ए अँधेरी डारी है, किधौं रति जे कामदेव जिहि सूरन रूप रन ताके समाज की सिलह पहरी है। गोरे गोल कुचन पै नीली कंचुकी ऐसी सोभायमान है।

अथ रोमराजी बर्नन

कवित्त

पाग रस पति को[३] बुनन नाभ[४] गाड ताते,[५]
　　महर[६] मनोभव कि पुरवन कौ[७] तार हैं।
सरल अलक ही की झाँई है अलप किधौं,
　　भखन तें भाग बयो[८] भोगनी कुमार हैं॥
बाला तन-सदन सँवारिबे कों 'बलभद्र',
　　धर गयो रेखा सूत बंध[९] सुतधार हैं।
पात से उदर पर तेरी रोमराजी मानौ,
　　जमल उरोजन कौ यह मिल सार है[१०] ॥४७॥*

टीका—मनोभव जे कामदेव सोई मानौ महर जे जुलावा हैं, तिहि नाभ-रूप गाड जे खाडो हैं तिहि माहै तें बुनन कूँ रसपत जे सिंगार रस ताकौ पाग जे भीज्यौ तार पुरवन जे पसायौ हैं, किधौं सरल जे सूधी अलकैं ताकी

पाठभेद—१. (ग) कुचपर। २. (ग) तेरी। ३. (ग) पति की। ४. (ख) वनन भानभ; (ग) बुनत नाभि। ५. (ग) बैठ्यो। ६. (ग) मिहर। ७. (ग) पुरइनि। ८. (ग) भरवत तें भागि बच्यो। ९. (ग) बाँधी। १०. (ग) उरोजन के पुहुमी रसारु है।

*'ग' प्रति में इस छंद का क्रमांक ४८ है।

ए झाँई है, कै भोगनी कुमार जे सरपनि कौ बचौ अलप जे छोटौ सो सोई भखन कैं डर मैं भागि कैं ह्याँवयौ जे बस्यो हैं। कवि कहैं बाल जे स्त्री ताके तनरूप सदन जे घर ताके सँवारिबै कौं कामदेवरूप सूतधार जे कारीगर सो सूत बँध जे सूधी रेखा धर गयौ हैं। किधौं जमल उरोज जे दोऊँ कुच ताकौ यह सार हैं, हे नायका तेरे पात से पसेरे उदर पर ए रोमावल ऐसी सोभायमान है।

रोमराजी बर्णन

कवित्त

बिष की लता सी बिन पान[1] भान दुहिता सी,
आसीविष अलपा सी भामनि की भाँति है।
कुच चकडोरन की डोरी मखतूर की कि[2],
ताकी अमीघटन चढ़ी पपील[3] पाँति है।
जठर अगन आभा डोरी नाभ कूप की कि,
चातुर चितन मैं चिहुँट अहँटाति है॥[4]
अलप उदर पर तेरी रोमराजी किधौं,
'बलभद्र' बानी की बिपंची ही की ताँति है॥४८॥*

टीका—ए स्याम रोमावल हैं सो विष की लता जे वेल हैं सो बिना पाना है, कै भानदुहिता जे जमुना हैं। सो अलप सी है, कै आसीविष जे साप ताकी भामनी जे सरपनि तिनकी सी भाँति हैं, किधौं कुचरूप चकडोर जे चकरी के वटा हैं ताकी ए डोरी मखतूल जे स्याम रेसम की हैं, कै कुचरूप अमीघटन जे अमृत के घड़े हैं ताकौं ताकि कै ए पपील जे कीड़ी तिनकी पाँत चढ़ी हैं, किधौं उदर मैं जठराअगनि हैं ताकी यह आभा जे धूवो है, कै नाभिरूप जे कूवौ ताकी ए डोरी हैं, याकी चिहुँ दिश जे स्याम तासो चतुर जे श्रीकृष्णजी ताके चित्त मैं अहँटा जे अटकनि हैं, किधौं बानी जे सरस्वती सोई बानी ताकी

पाठभेद—१. (ग) पात। २. (ग) किधों। ३. (ग) पिपीलिका की। ४. (ग) चतुर चितौनी मैं चिहुँटि अहटाति है।

*'ग' प्रति में इस छंद का क्रमांक ४७ है। 'क' प्रति में यह छंद बहुत ही अशुद्ध लिखा गया है जिसमें बीच के दो चरणों के अंश नहीं हैं जिससे छंद त्रुटित हो गया है।

विपंचि जे बीन है ताकी यह ताँति है। कवि कहैं हे नायका तेरे अलप जे पतरे उदर पर रोमावल ऐसी सोभायमान है।

त्रिबली बर्नन यथा

कवित्त

पारावार रूप की तरंग तुंग 'बलभद्र',
जोबन जिहाज जलजीव हिल[1] जात है।
ग्यानिनि के ग्यान जोग ध्यानिनि के ध्यान छूटे,
मुनि मनसाऊ डाँवाडोल[2] डगुलात[3] है॥
जामें तीनो लोक की तरुनीनि की सोभा सब,
सहज सलिलगामनीनि लौं समाति है।
बिधिकर बली त्रिबलीय[4] तेरी तीय किधौं,
छीन[5] कटि जानि दीनी कंचन की पाँति है॥४९॥

टीका—कवि कहै रूपकौ ए देहरूप पारावार जे समुद्र हैं सो तुंग जे बड़ो हैं, ताकी ए तरंग जे लहरे हैं, यातैं ए समुद्र वातैं अधिक हैं या लखिकैं ग्यानीनि के ग्यान पुनि जोग ध्यानीन के ध्यान छू दे जे छूटे हैं। मुनि जे मुनेसर हैं ताहू की मनसा डाँवाडोल जे चलविचल कैं कै डिगुलात जे डिगत है, कै सहजसलिल गामनी जे ए सहज की नदी की तरह है, यामैं तीनौं लोक की तरुनीन की सब सोभा समाति है, कै कटि छीन जानि कै कंचन की पाती दीनी है। हे नायका बिधिकर बली जे ब्रह्मा के हाथ की बनी तेरी त्रिबली ऐसी सोभायमान है।

अथ नाभि बर्नन

कवित्त

सोभा की तरंगनी के तोय को भँवर किधौं,
सोने की सुपथ भू मदन-कीट कीनो है।[6]

पाठभेद—१. (ग) जिय में। २. (ग) मुनिन के मत डोंगा डोलि। ३. (ख) डिगुलात; (ग) डगलात। ४. (ग) विधि कर बल्ली के त्रिबल्ली। ५. (ख) छीनक। ६. (ग) बे मदन कोट कीनो है।

पीय नैन गोलिका कि खेल की खलेल किधौं,
'बलभद्र' पारखी सुलाक[1] काम दीनो है ।।
राख्यो करि अचल सचलता बिसार सब,
हेर चित चंचरीक रंध्र रस भीनो है ।
नाभि तेरी तरुनि निबान[2] किधौं मोहनी कौ,
मेरे मन मोहन कौ मन हर लीनो है ।।५०।।

टीका—ए देहरूप सोभा की तरंगनी जे नदी है ताकौ सोभारूप ही तोय जे जल है ताकौ ए नाभि सोई मानौं भँवरि हैं, कै देहरूप सोनै की सुपथ भू जे भली प्रथवी है तामें कामदेव रूप रूपईया हैं ताकी यह गोलि के गोलक हैं कै पियकै खेलबै की खलेल गुची है, कै कवि कहैं कामदेव रूप पारखी हैं जिहिं ए सुलाक दीनी है, याकौं रसभीनौ रंध्र जे छिद्र लखिकैं नायक रूप चंचरीक जे भ्रमर जिहिं सब सचलता बिसारि कै चितकूँ ह्याँ अचल कर राख्यो है, मेरे मन मैं मानौ ए मोहनी कौ निबान है, ह्याँ मोहनी जे श्रीकृष्ण ताकौ मन हर लीनौ है, हे तरुनी तेरी नाभि ऐसी सोभायमान है ।

अथ कटि बर्नन

कवित्त

ताग[3] सो तपा[4] सो बार लीक सौ लुकांजन[5]
छनदी[6] को सौ छंद कहिबे को[7] छलियतु है ।
चितहि परत चूक[8] जात है चितौन जिहि,[9]
नैनन की गति कौ गुमान दलियतु है ।।
पगन धरत धरकत हीयौ 'बलभद्र',
डगन भरत डगमग हलियतु है ।
कुच कच हार चीर बीरन[10] कौ भारी भार,
ऐसे झीने[11] लंकसो[12] निसंक चलियतु है ।।५१।।

पाठभेद—१. (ग) सुलाख । २. (ग) निवास । ३. (ग) तार । ४. (ग) तगा । ५. (ग) सो । ६. (ग) छंदी । ७. (ग) में । ८. (ग) चौंकि । ९. (ग) जहाँ । १०. (ग) बारन । ११. (ग) छीने । १२. (ख) लंकन; (ग) लंक पै ।

टीका—ताग सौ जे डोरा सौ पुनि ताप सौ जे तपस्या कौ सौ ध्यान है, कै बार लीक जे पानी की लीक सो है, कै लुकांजन जे लोकलाज रूप न छनदी जे न ई नदी ताकी बंद जे रचना है सो कहिबैकूँ छलीयतु है। याते कहिबै मैं नावैं जिहिँ चितौन जे देखत ही चित कौं चूक पर जात है, पुनि नैनन की गति को गुमान दलियतु है, कवि कहैं पग धर तब हीयौ धरकत है। डग भरत तब डग-मग हलियतु है, कुच कौ कच जे केसन कौ हारन को चीर कौ विर जै कानकुंडल के, भारी भार तातैं ऐसे झीने लंकसौ निसंक नाहीं चलियतु है।

अथ मदन स्थान बर्नन

कवित्त

नाहीं नाहीं करै तऊ ऊढा नार 'बलभद्र',
नायक नबल ऐसे नीबी सोधी बल कै।
तोय कौ तरोटा अधरोटा अंग इंगुर सो,
आँगुर द्वै तीन कटि बूटौ छूट झलके॥
ताहि छबि देख और गोरो गुदकारो गात,
लाग रहै लोचनन बल नाहिँ पलके।
पर्‌यौ मन गैंवर है सोभा के गहर गाड,
खैंच्यौ न खचत खेंच हारे बुद्धि बल के॥५२॥*

टीका—कवि कहैं ऊढ़ा नारि नाहीं नाहीं करै तऊ ऐसे ही मैं नबल नायक जिहिँ बल करि कै नीबी जे नाडे की डोरी सोधी जे सरकाय खोली कटि वूढो छूट जे कटि के नीचे अधबीच मैं आंगल द्वै तीन भर अंग सो इंगुर जे हिंगलू सोहैं सो मानौं तोय कौ तरोटा जे जल कौ भवर हैं, कै अधरोटा जे जलकी लहर कौ पाछौ फिरबो सोहैं ताकी छबि गोरो गुदगुदौ गात देख लोचन लग रहै, पलकै नबल नाहिँ जे लगैं नाहीं, मानौ ए सोभा कौ गहर गाड जे अथाह खाडो है, तामैं नायका को मन सोई मानौ गैंवर जे हाथी पर्‌यौ है, सो बुधि बलि करिकैं खैंच हारे पैं खंचौ खंचत नाहीं, मदन स्थान ऐसो सोभायमान है।

---

*'ग' प्रति में 'मदनस्थान वर्णन' वाला यह छंद नहीं है। फलतः 'क', 'ख' प्रतियों की छंद-संख्या ६७ है, जब 'ग' कि प्रति की ६६ ही हो गयी है।

अथ जंघ बर्नन

कवित्त

कदली के मूल हैं स ऊख तें[1] सहित एतौ,
सहित मयूख[2] गुनरहित दबे रे[3] हैं।*
जाके तन-रोमनि की पावै न रमनि[4] रुचि,
मरे जान रंभा हू के करभ करेरे हैं॥
रद्द मत[5] तिनकौ दुरद-कर जे कहत,
धुरी कामरथ हू की उपमा अनेरे हैं।
सोभा के सदन हैं कि काच कलधूत[6] खंभ,
किधौं भोरी भामनी जुगल जंघ तेरे हैं॥५३॥

टीका—ए जंघैं सो कदली के मूल जे केल के खंभ से हैं, पुनि उख जे रसता समेत हैं, पुनि मयूख जे क्रांत सहित हैं, ए गुन कदली मैं नहीं। तातैं जमी मैं दबि रही हैं, जाके तन की रुचि जे सोभा ताकौं रमन जे कामदेव की स्त्री सोई पावै नाहीं, तो कवि कहैं मेरे जान रंभा अपछरा हू के करभ जे जंघस्थल करेरे जे करडे हैं, अनि कविसुर याकौं दुरद कर जे हाथी की सुंड करि बरनत हैं, पुनि कामदेव के रथ की धुरी करि कहत हैं वे रदमंत्र जे मंदबुद्धि हैं, वाकी उपमा कौ पौंहचैं ऐसी इनमैं सामर्था नाहीं, किधौं ए सोभा के सदन जे घर हैं, कै काच के पुनि कलधूत जे सोना के खंभ हैं, हे भोरी भामनी तेरी जंघैं ऐसी सोभायमान हैं।

अथ जंघ नितंब कटि बर्नन

कवित्त

भारी घन[7] नितँब प्रथु[8] पेखियतु कटि नि-
कट[9] घटि केहरी-कुमार कौ सौ माप है।

पाठभेद—१ (ग) ऊखमा। २. (ग) महूख। ३ (ग) बहेरे। ४. (ग) नार मन। ५. (ग) मति। ६ (ग) कलधोंत। ७ (ग) भारी अति जंघन। ८. (ग) पृथु। ९. (ख) निकटि।

* 'क' प्रति में यह चरण त्रुटित है जिसमें पाँच वर्ण छूट गये हैं, फलतः छंद सदोष हो गया है।

बिंधि के से सिखर उछाए हैं उरोज दोऊ[१],
मानौ[२] 'बलभद्र' आचारज कौ सलाप है ।।
मेटि[३] बिधि[४] बिधि बालापन के बिनोद सब,
करि नये[५], बिग्य[६] रसनाकौ अलुलाप[७] है।
श्रोनन की गुरुता[८], सुलपताई लंक भयो,
बारहै बरस गुरु सिख कौ मिलाप है ।।५४।।

टीका—नितंब घने भारी पुनि प्रथु जे गाढ़े कटि के निकट पेखीयतु, अरु कटि ऐसी है जु मापे ते केहरी कुमार जे नाहर कौ बचौ ताहू की कटि तैं घटि है, और उर रूप विध्याचल पर्वत ताके सिखर से उरोज जे कुच उछाए जे सोहै हैं, सो कवि कहै आचारज जे कामदेव ताकौ मानौ सलाप जे सिंहासन है, विग्य जे चतुर विधि जे ब्रह्मा जिहिं बालापन के विनोद सब विधि मेटि नये करे, सो रसना जे जीभ ताकौं बखान तैं अलुलाप जे अरबरात हैं, श्रोन जे नितंब ताकी तौ गुरुता अरु लंक की सुलपताई सोई ए गुरु अरु सिख इन ही कौ मिलाप भयौ, ऐसै नितंब कटि कुच सोभायमान है।

अथ पींडरी बर्नन

कवित्त

किधौं बैस बेलबे के बेलन बनाए बिधि,
सोभा धर सधर सकल सुखदाय की।
कोमल अमल दल केतकी की कली कैं कि,
केसर कलाई चोर[९] मनमथराय की ।।
किधौं 'बलभद्र' सोधि सकल सुहाग गुन,
सुचिर रुचिर बिधि[१०] पीड़ी द्वै बनाय की।
आभा बड़ि[११] सो तन की[१२] ऐपन सों माँडी[१३] मानौ,
किधौं पोमनी य तेरी पीडँरी[१४] सुभाय की ।।५५।।

पाठभेद—१ (ख); (ग) उर। २. (ग) कैधों। ३. (ग) मेटे। ४. (ख) बिधि; (ग) बेद। ५ (ग) दियो। ६. (ख) विम्प; (ग) व्यंग्य। ७. (ग) अनुलाप। ८. (ख) गुरुताई। ९. (ग) मानो। १०. (ग) रचि। ११ (ग) खंडि। १२ (ग) सौति किये। १३. (ग) मांज्यो। १४ (ग) पीडुरी हैं तेरी पद्मनी सुभाई।

टीका—विधि जे ब्रह्मा जिहिँ बेस जे आवदी बेलबे जे बधावे के ए बेलन बनाए हैँ, कै सुख दैनवारी धर जे भूम ताकी सोभा सकल सोभा ह्याँ सधर ह्वै रही है, किधौँ कोमल अमल जे नृमल केतकी की दल जे पँखुरीयँ हैँ, कै मनमथराय जे कामदेव ताकी केसर चोर कैँ कलि जे मनोहर बनाई है, कै कवि कहैं विधि जे ब्रह्मा जिहिँ सकल सुहाग गुन सोध कैँ सुचिर जे नृमल, रुचिरु जे मनोहर दोय पीडी बनाय कैँ करी हैँ। ऐपन सौँ माडी सो मानौ सोतन की आभा जे सोभा खडी जे विशेष कैँ न्यारी की है, हे पोमनी नायका तेरी पीडरी सुभाय की ऐसी सोभायमान है।

अथ जेहरि बर्नन

कवित्त

सुभग सिँगार लोक सुंदर सुवन[1] मन,
पेखत परम उपमाऊ बिसरत हैँ।
गति कौ सदन हैँ कि मदन मेवास किधौँ,
गरजी[2] पिया की मति तिन सौँ अरत हैँ॥
पेम छत्र डंड कि बिजै कौ बलै 'बलभद्र',
कलि धुनि राग रागनीन निंदरत हैँ।
पूरन मयंकमुखी तेरी सुनि एरी यह,
जेहर[3] बिहारी जू के मन हिँ[4] हरत हैँ॥५६॥

टीका—इन जेहरन कौ सुभग जे भलौ सुन्दर सिंगार पेख जे देखि कैँ लोक जे देवता सेऊ परम जे अधिक सुवन जे प्रफुलित ह्वै मन तै उपमा बिसरत हैँ, किधौँ ए गति जे चाल ताकौ सदन जे घर हैँ, कै मदन को मेवास हैँ, पीय की मति जे बुधि ताकी गरजी सोई धीरज सो तिन सौँ अरत जे अटकत है, किधौँ प्रेमरूप छत्र विजय जे जीते हैँ, ताके ए पगरूप डंड है ताके ए बलै जे कवेजा हैँ, कवि कहैँ पुनि ए राग रागनीन की कलि जे मनोहर धुनि हैँ, सो ए निंदरत जे दूर करता हैँ। ए श्री बिहारी जू के मन कौँ हरतु हैँ। हे पूरन मयंक मुखी सुनि तेरी ऐ जेहर ऐसी सोभायमान है।

पाठभेद—१. (ग) सुपन। २. (ग) गुरज; (ख) गुरुजी। ३. (ग) जेहरि। ४. (ग) मन को।

अथ तिरोछा बर्नन

कवित्त

सातग[1] सिताई रजगुन को रताई मानौ,
तामस के त्यागी सखीजन[2] के सहाय के।
कोमल अमल दल मोहनी के पुस्तक की
राजति रुचिर बिधि चरन[3] सभाय के॥
प्रेमदल दल की सुपथ भूम सोभैं[4] किधौं,
रहैं खिंच[5] लोचन-तुरंग हरिराय के।
किधौं मीनकेतन तलप एतौ[6] रस दल,
'बलभद्र' तरुनी तिरोछा तेरे पाय के॥५७॥

टीका—सातग जे सतोगुन ताकी तो मानौ सेतता है अरु रजोगुन की ललाई है, तामस कौं त्याग कीयैं सखी जन के सहायक हैं, ए कोमल अमल जे नृमल मोहनी के पुस्तक दल जे पत्र ताकी विधि से चतुर सुभाय रुचिर जे मनोहर राजत हैं, किधौं प्रेम को दल जे लसकर ताके दल जे ठहरबे की सुपथ जे भली भूम सो भत हैं, हरिराय जे श्रीकृष्ण जी ताके नेत्ररूप घोरा सो या भूम परि खिच जे अटक रहै हैं, कवि कहै रसदल जे कमल पंखुरीयें तिनकी ए मीनकेत जे कामदेव ताकी तलप जे सेज हैं, हे नायका तेरे तिरौछा ऐसे सोभायमान हैं।

अथ जावक बर्नन

कवित्त

किधौं बंधुजीव सेवै चरन सुगंध काज,
सोहत सकल सुभ रजगुन सीव है।
फूलि फूलि[7] सकुच कला सों हारे[8] कोकनद,
'बलभद्र' किधौं ए सनाल कंज ही वहै॥[9]

पाठभेद—१. (ग) सात्विक। २. (ग) सुखजन। ३. (ग) बरन। ४. (ग) भूमि सोहै। ५. (ग) फँसि। ६. (ग) ताम। ७. (ख) फूल-फूल। ८. (ग) निहारे। ९. (ग) कंटक मनाल छिद्र ग्रीव है।

कनक की भूम घर पूर रही[1] भारती कि,
इंगुर की आकर बसत पीव जीव है।
राते[2] रसरौद्र रस तीय तेरे पाय सोहै,
जाबक की जोत कि सिँगारन की सीव है ।।५८।।

टीका—बंधुजीव जे दुपहरीया को फूल सो मानौ सुगंध पायबेकै चरन सेव है, कै सकल रजोगुन की सुभ जे भली सीव ए सोहत है, कवि कहैँ ए पायरूप सनाल कंज जे नालसहित कमल लखिकैँ कोकनद कवल सो या मैँ जाबक की ललाई देख फूलि फूलि कै सकुचि कला सौँ हारे हैँ, किधौँ पायरूप कनक की भूमि हैँ, तहाँ मानौँ भारती जे सरस्वती नदी सो घर पूर जे घर माँड रही हैँ, ए इंगुर की आकर जे हिंगलू की खान जैसी पीय कै जीव मैँ बसत हैँ, जावक की जोति करि पाय रौद्र रस से राते सोहे है, हे तिय तेरे पाय जावक कौ रंग है सो सिँगारन की सीव सोभायमान है।

अथ बिछीया बर्नन

कवित्त

नवबति गति की[3] कि फिरत[4] दुहाई काम-
कारिका सुहाई[5] कि कहाई सुभ भारती।[6]
समर समर-काज भटनि[7] कवच साजे[8],
बजत[9] तबल सौति लजत निहारती ।।
गुन के प्रसंसी कि सुहाग अंसी 'बलभद्र',
मुदित उदित सखी कहि[10] तन[11] बारती।
कोमल अमल पद-पल्लवनि हंस किधौँ,
मदन महोछै कोँ संजोय राखी आरती ।।५९।।

पाठभेद—१. (ग) कनक की भूमि पूर पूरि रह्यौ। २. (ग) एते। ३. (ग) नौबत की गति है। ४. (ग) रति की। ५. (ख) सुनाई; (ग) सोहाई। ६. (ग) कहत या सुभारती। ७. (क) मदन। ८. (ग) कसे। ९. (ग) बाजत। १०. (ग) सहचरी। ११. (ग) तृन।

अथ नूपुर बर्नन

कवित्त

लाज के सँघाती किधौं घाती मुनि ध्याननि के,
मन मोहि 'बलभद्र' थाती ए[१] लहत हैं।
जाबक सरसुती[२] के कुलदेव-द्विज किधौं,
करत निगम धुनि अघनि हरत[३] हैं॥
प्रीत के पढावनि[४] है गावनि है भावनी कि,
कानन कौ काम की कहानी-सी कहत हैं।
नूपुर बिचित्र तेरे चरनन नीकी धुनि[५]
तिनके सुनत ही बिचार न रहत हैं॥६०॥*

टीका—कवि कहै ए लाज के संघाती हैं, पुनि मुनिसुरौ के ध्यान के घाती हैं। ए मन कौं मोहि कै थाती जे थिरता लहत हैं, किधौं जाबक जे अलता कौ रंग सोई मानौ सरस्वती ताके ए कुलदेव-द्विज जे कुल के प्रोहित हैं, सो अघ जे कलेस हरबैको ए निगम धुनि जे वेद पठत हैं, किधौं प्रीत के पढ़ावनवारे हैं, कै भावनी जे वांछा ताके गावनवारे हैं, कै कानन कौ कामदेव की कहानी कहत हैं, तिनके सुनत ही कोऊ विचार नाहीं रहत हैं। हे विचित्र तेरे चरन नूपर ऐसे नीके सोभायमान हैं।

अथ पग के नष बर्नन

कवित्त

किधौं मन-बेधन बनाए बिधै बिधेना कि,[६]
देख दस दर्पन से मोहे नंद के लला।
हंसनि की गोलिका[७] कि तारन की तारिकानि,[८]
कँवल दलन पर स्वाति बूँद की झला॥

पाठभेद—१ (ग) से। २ (ग) सरस्वती। ३. (ग) दहत है। ४. (ग) बढ़ावन। ५. (ग) चरन परन नीके। ६. (ग) कैधों मन वेधन को बेधना बनायो बिधि। ७. (ग) हँसन के गोलक। ८. (ग) तारे तारिकान हीं के।

* (ग) प्रति में यह छंद ५८वाँ है।

अंतर की आभा करवीर रक्त कोरिका कि,
'बलभद्र' निरख सिहात नित ही लला।
सकुचाई[1] चंदमुखी तेरे नखचंद किधौं,
काम के कलंबन की, भली चंद की कला ॥६१॥

टीका—ब्रह्मा ए मानौ मन बेधन कौं बिधेना जे बेधनवारे बनाए हैं, कै ए दस दर्पन हैं, सो देख कैं नंद के लला जे श्रीकृष्ण मोहित होत हैं, किधौं हंसनि की गोलिका जे नेत्रतारिका हैं, कै तारन की नेत्रतारिका हैं, कै अंगुरीयै सोई मानौ पगरूप ए कमल की पंखुरीयै हैं ताके ऊपर स्वातिबूंद की झला जे झलकत है, किधौं देह के अंतर उजलता है ताकी आभा जे क्रांति बाहिर है, कै रक्त जे लाल कखीर जे कनेर ताकी कोरिका जे कली है, कवि कहैं याकौं निरखि हैं लला जे श्रीकृष्ण नितही सिहात प्रफुलत होत हैं, हे चंदमुखी तेरे नखरूप चंद है सो कामदेव के कलंब जे मुख की पुनि चंद्रमा की भली कला सकुचाई ऐसे नख सोभायमान है।

अथ गति बर्नन

कवित्त

छबिनि की छाया सब सुखनि की सुखदाया,
मोहनी की माया किधौं काया है अनंग की।
चित ही की चातुरी कि आतुरी चरन ही की,
कातरी[2] कपट प्रीतबंदी सब अंग की॥
'बलभद्र' भाग की सुहाग की सहायक कि[3],
प्रीत की उदार[4] सखी जोबन के संग[5] की।
पीय सुखदैनी इंदीबर नैनी तेरी गति,
सारस मराल गजराज गति भंग की॥६२॥

टीका—ए छबिनि की छाया जे सोभा की सोभा हैं, कै सब सुखन कों सुख की दाता हैं, कै मोहनी की माया जे रखवारी हैं, कै अनंग की काया हैं, किधौं ए चित की चतुराई हैं। ए चरनन की आतुरी जे चपल तासो

पाठभेद—१. (ग) सोहत हैं। २. (ग) कातुरी। ३. (ग) सहाय किधों। ४. (ग) नीति के वकील। ५. (ग) मन्द।

मानौं कपट की कातरी जे काटनवारी है, कै सब अंग की प्रीतबंदी जे प्रीत की निभावनवारी है। कवि कहैं ए सुहाग के भाग भाग की सहाइक हैं, कै प्रीत की उदार जे बढ़ावनवारी हैं, ए जोबन के संग की सखी हैं है पियकों सुखदैनी इन्दीवर जे कमलनैनी तेरी गति जे चाल सो सारस की की मराल जे हंस की पुनि गजराज की गति कौं भंग कीयैं। ऐसी सोभायमान है।

अथ सुभाय सिंगार

कवित्त

अलप अधर कटि मुखा अलप ऐन,
सुनत बसेखे[1] बैन बीना पिक कीर[2] के।
सुरभि[3] कपोल प्रम[4] सुभर सुभर[5] उर,
सुभर नितंब मन मोहैं मुनिधर[6] के ।
नृमल[7] दसन बैन[8] नख मन[9] 'बलभद्र',
मानौ फेन सोहत सुरसरी के नीर के।
स्याम पाटी तारे मुख राजे[10] कुच अग्र तेरे,
सोहत[11] सिंगार ए सुभायक[12] सरीर के ॥६३॥

टीका—अधर जे होठ पुनि कटि मुखा जे मुरचा ए तो अलप है और बैन है सो बीना तैं पुनि पिक जे कोयल पुनि कीर जे सूवा हु तै बसेखैं हैं, कपोल हैं सो प्रम जे कदीम तैं सुरभी जे कठन हैं। अरु नितंब सो सुभर जे भारी हैं, सो ए मुनिधर जे मुनेसुर तिनहू के मन कों मोहै हैं। कवि कहैं मन बानी दंत नख ए नृमल हैं सो मानौ सुरसुरी जे श्री गंगाजी के नीर के फेन हैं, पुनि पाटी पुनि नेत्र तारे स्याम हैं, मुख सो राजी जे चंद्र सोहैं, पुन कुच अग्र जे कुचा के अनी है, हे नायका तेरे सुभाय ही के सिंगार सोभायमान हैं।

पाठभेद—१. (ग) बिसेख; (ख) वसेषैं। २. (ग) कौर। ३. (ग) सुभर। ४. (ग) खरे। ५. (ग) सुभाय। ६. (ग) सुनिधर। ७. (ग) निर्मल। ८. (ग) नैन। ९. (ग) मांग। १०. (ग) रोमराजी; (ख) मुषराजी। ११. सोरह। १२. (ग) स्वाभाविक।

अथ सोरह सिंगार बर्नन

कवित्त

करि दंत-धावन उबटन उबटि[1] अंग,
मञ्जन कै अंग अंगुछान[2] अंगु छाई है।
कर कै तिलक मैन पाटी पार[3] 'बलभद्र',
भाल भली बंदन की बिंदुका[4] बनाई है॥
अंजन दै नैन, देख दर्प्पन[5] चिबुक चिन्ह,
अधर तँबोर[6] की अधिक छबि छाई है।
महँदी[7] करन[8] एडी झाँई दै महावर कौं,[9]
सोलह[10] सिँगारन की मूल चतुराई है॥६४॥*

टीका—कर जे हाथ पुनि दंत धोए अंग कै उबटन उबटि जे कुंकुम की भली बिंदुका बनाई है, पुनि दर्प्पन जे आरसी देख नैनन अंजन दे चिबुक कौ चिन्ह कीन्हो है, पुनि अधरन कै तंबोर की छबि अधिक छाई है। पुनि करन कै महँदी अरु एडी कै महावर जे अल तौ ताकी झांई ही हैं, ए सोरह सिंगार याकी मूल चतुराई है, सोरह सिंगार चतुराई सहित ऐसै सोभायमान है।

अथ बारह आभरन बर्नन

कवित्त

बेनी भाल माँग श्रुत[11] नासिका के 'बलभद्र',
कंठ के कनक के सु बरन अपार हैं।[12]
भुज पुहिचांनि[13] करपल्लव के कौन गनै,
उरन के मंडन जिते हमेल हार हैं॥[14]

पाठभेद—१. (ख) उचट; (ग) उबटि। २. (ग) देह अंगौछानि। ३. (ग) पारि। ४. (ग) बिन्दुकी। ५. (क) दरप्पन। ६. (ग) तमोर। ७. (ग) मेहँदी। ८. (ग) करनि। ९. (ग) कौ। १०. (ग) सोरह। ११. (ग) श्रुति। १२. (ख) कंठ के कनक सुवर अपार हैं; (ग) कंठिन सु कंचन को बरन अपार हैं। १३. (ग) भुजन के पहुँचा के पुनि। १४. (ग) उर के जिते हमेल हार हैं।

*यह चौथा चरण 'ख' प्रति में छूट गया है।

कटि मुखान के सुहायन कौं[1] अंगुरी कि,[2]
बिछिया आदि दै कै जितकौं[3] झनकार हैं।
चीर मन-धातुर[4] सुगंध बार[5] अलंकार,
बारह आभरन ए सोरह सिंगार हैं॥६५॥

टीका—कवि कहै वैनी जे चोटी के पुनि भाल जे ललाट के पुनि माँग के श्रुति जे कांनन के नासिका के कंठ के सुबरन जे भले कनक के अपार आभरन हैं, पुनि भुज के पुहिचांनि के करपल्लव जे हाथ की अंगुरीयान के पुनि उर जे हीय के मंडन जेते हमेल जे डोरा हार हैं सो कौन गनैं कटिकैं मुखांन के मुरचांन के पाय की अँगुरी पान के सुहायन कौं। बिछिया आदि दे जितो को झनकार है, पुनि मन धातुर जे मनधर, कैं बार जे केसन कौं सुगंध करे हैं, पुनि चीर अलंकार धारै ए बारह आभरन सोरह सिंगार सोभायमान है।

देह बर्नन

कवित्त

पलिका तें पाव जो धरत धाम धरती[6] में,
छिनक में छाले परैं[7] पैंडक गवन तें।
लीले जो तँबोर तौतौ ताप[8] आवै 'बलभद्र',
होत है अरुचि पान-पीक के अवन तें॥[9]
हार ही के भार ओर तन के चीर के भार,[10]
तातें[11] होत नाहीं बाल बाहिरी भवन तें।
लागै जौ समीर तौ तौ पूरै परैं सौतन के,
फूल लौं[12] उड़त प्यारी पंखा के पवन तें[13]॥६६॥

पाठभेद—१. (ग) सुपायन की। २. (ग) आँगुरी के। ३. (ग) बिछियान आदि दै जितेक। ४. (ग) मनि चातुर। ५. (ग) चारु। ६. (ग) धरनी। ७. (ग) छाले परे पग माझ पैंड के गवन तैं। ८. (ग) जो तमोर तब ताप। ९. (ख) पांन पीव के अवन तैं; (ग) पान पीक अचवन तें। १०. (ग) कारन के भार हार चीरन के भारी भार। ११. (ग) यातैं। १२. (ग) ज्यौं। १३. (ग) अलि पंख के पवन तें।

टीका—पलिका जे पलंग तें धामकुं घर की धरती में पाय धर कैं पैंड एक गवन करैं, चले तो छिनक में छाले परैं अरु जो तँबोर जोता वेर की बखत लीलैं जो नीगरैं तो ताप आवैं, कवि कहैं पीक के आवन तैं पान हू अरुचि होत हैं, हार के पुनि तन जे कुचन के पुनि चीर के भार के सब करि बाला भौन जे घर तैं बाहिरी नाहीं होत हैं, जो पवन झकोर लगैं तौ तौ सोतन के पूरे परै जे वांछै होत हैं प्यारी पंखा हू के पौन तैं फूल लौं उडत हैं, ऐसो अंग सुकुमार सोभायमान हैं।

अथ वय कलस बर्नन

छप्पय

सज्जनता सीलता सलजता सुंदरताई।
गुन गंभीर ग्यानता[1] चतुर गोरत्व[2] गुराई ।।*
उज्ज्लता[3] सुचि[4] अंग धरत चितै अचलाई।[5]
अलप मान मन बिमल कमलमुख[6] पिय सुखदाई ।।
मित बैन नैन[7] प्रफुलित मुदित पट्ट[8] प्रमल भूषन सुभर।[9]
सोभाग भाग सोहत[10] सरस सिख नख बरनत बिबुध नर ।।६७।।

टीका—सजनता जे भलाई पुनि सीलवंत लज्यावंत पुनि सुंदरवंत सुंदरताई जे रूपवंत पुनि गुन करिकैं गंभीर, पुनि सुग्यान, पुनि चतुर पुनि गौर वरन पुनि गुरुताई जे बड़ाई, पुनि अंग की सुचि जे पवित्रताई, उजलताई, पुनि चित्त मैं अचलाई धारैं, पुनि मन विमल जे नृमल तातैं मान अलप, पुनि कमलमुखी पिय जे श्रीकृष्ण जू नैन बैनन तैं मुदित जे हरष करि प्रफुलित हैं, पट्ट जे कपरे पुनि प्रमल जे सुवास, पुनि भूषन कौ भार जे समूह हैं, भाग जे ललाट पै सोभाग जे जस सरस सोभित हैं, इहि भाँति चतुर नर सिख नख बरनत हैं ।।

पाठभेद—१. (ग) ज्ञानता। २. (ख) गौरत्व; (ग) गुरुवन्त। ३. (ख) उजलता। ४. (ख) शुचि। ५. (ग) धीरता चित अचलताई। ६. (ग) कमलमुखी। ७. (ग) मिठि बानी नयन। ८. (ग) मुख। ९. (ग) परिमल भूखन निभर। १०. (ग) सौभाग्य भाग्य सोभित।

* 'ग' प्रति में दूसरी तथा तीसरी पंक्ति में एक वर्ण अधिक है। पाँचवीं में दो वर्ण अधिक हैं।

दोहा : इह सिख नख कै अर्थ मैं भूल कछू जो होय।
चंद करत अरदास कवि छिमा कीजीयो जोय ॥

(क) इति श्री बलभद्र कृत नख सिख समाप्तं ॥
मीती आसाढ़ सुद १२ गुरवार संमत १८९०*

(ख) **दोहा :** इह सिख नख कै अर्थ मैं भूल कछू जो होय।
चंद करत अरदास कवि षिमा कीजीयो जोय ॥
इति श्री सिख नख टीका सहित संपूर्ण ॥

(ग) 'इति श्री ओड़छा नगर निवास द्विज कुल मुकुट माणिक्य मिश्रोपनामक सुकवि शिरोमणि बलभद्र कृत सिखनख संपूर्णम्।'

॥ समाप्तम् ॥

परिशिष्ट

परिशिष्ट : १

शब्द-कोश

(कोष्ठक में दिये हुए अंक छंद-क्रमांक हैं ।)

अ

अंगुछान अंगौछा (६४)
अगार—घर; भवन (५)
अग्र—आगे (२९, ३७)
अघनि—पाप (६०)
अघात नहिँ—तृप्त नहीं होता (३५)
अच्छ (सं० 'अक्षि')—आँख (१५)
अछून—स्पर्श न करने के लिए; न छेड़ने के लिए (४४)
अजिर—आँगन (५; ३४)
अटकबे की—अटकाने की (२०)
अतनु—अनंग; कामदेव (४५)
अदेह—कामदेव (१७)
अनंग—कामदेव (९; २३; ४४; ६२)
अनत—(सं० 'अनंत')—१. शेषनाग; २. विष्णु; (९)
अनहद धुनि—अनाहत नाद; दोनों हाथों के अँगूठे से दोनों कान बंद करने पर योगियों को भीतर सुनाई पड़नेवाला एक प्रकार का शब्द (२८)
अनु—(सं० 'अणु')—अंश (२५)
अनुप्रत—छोटा (२१)
अनुराग—प्रेम (अनुराग का वर्ण लाल माना गया है) (४१)
अनेरे—व्यर्थ; झूठ; निष्प्रयोजन (५३)
अपांग—कटाक्ष (१५)
अपायन—मुक़ाम (२२)
अबली—(सं० 'अवली')–पंक्ति (२६; ४४)
अमल—निर्मल; स्वच्छ (३४; ५५; ५७; ५९)
अमी—अमृत (४६)
अमीकुंभ—अमृत के कुंभ या कलश (४४)
अमीघट—अमृत के घड़े (४८)
अमोद—सं० 'आमोद')–सुगंध (३१)
अरुन—लाल (३)
अरुन-उदो—अरुणोदय (३०)
अरुनता—लालिमा (२५)
अलक—बालों की लट (४७)
अलप—छोटा (४७)
अलि—भौंरा (७; ४४)
अलुलाप—लड़खड़ाती है (५४)
अवनतैं—आनेसे (६६)
अवरेखे—चित्रित किये; आँजे (१३)
असार—१. नदी; २. धारा (४)
असिताई—श्यामता (३)
असु—(सं० 'अंशु')–किरण (३६)
अहँटाति—अटकती है (टीकानुसार) (४८)

आ

आकर—खान (२८; ५८)
आघ्रन—सूँघने की क्रिया (७)
आचारज—आचार्य (यहाँ 'कामदेव') (५४)
आछे—अच्छे (१५)
आतुरी—पादत्राण; चप्पल (६२)
आन—लाकर (२३)
आनन—मुख (२९; ३४; ३५)
आपगा—नदी (४)
आभरन—अलंकार (६५)
आभा—शोभा; कांति (११; १९; ५५; ६१)
आयस—लोहे का कवच; रक्षा (९)
आयो हुतौ—आया था (४५)
आलय—घर (२८; ४०)
आसीविष—साँप (४८)

इ

इंगुर—सिंदुर का एक भेद (५२; ५८)
इंदीबर—कमल (६२)
इंदीबर नैनी—कमल जैसे नेत्रवाली (६२)
इंदु—चंद्रमा (६)
इंदु-नारि—चंद्रमा की वधू; ममोला; वीरबहूटी (एक कीड़ा जिसका रंग लाल होता है) (६; २५)

उ

उछाए—शोभित हैं (५४)
उजारे (उजाला)—प्रकाश (३५)
उडुगन—तारे (४०)
उडुप—तारों का स्वामी; चंद्रमा (६)
उडुप—नौकाविशेष; नदी पार उतरने के लिए बाँसों में घड़े बाँधकर बनाया हुआ ढाँचा (अर्द्धचंद्रमा को भी विशेषतः उडुप इसलिए कहा जाता है कि उसका आकार नाव जैसा होता है।) (११)
उदित—(यहाँ टीका के अनुसार) 'देखने से' (२०)
उदोत—उदय; प्रकाश (१४; ३४; ४३)
उनिहार—(सं० अनुसार)—सदृश (२६)
उपज्यौ—उत्पन्न हुआ (३३)
उपम्य—उपमाएँ (५३)
उपाई—उत्पन्न की (४)
उबटि—उबटन मलकर (६४)
उभय—दो (३७)
उभे—दोनों (२)
उभै—दो (४३)
उरध—ऊँचे (७)
उरोज—स्तन (३१; ४५; ५४)
उलसत—उल्लसित होता है; प्रसन्न होता है (३५)

ऊ

ऊढ़ा—ब्याही, किन्तु परपति से प्रेम करनेवाली नायिका (५२)

ऐ

ऐपन—हल्दी के साथ गीला पीसा चावल जिससे ब्याह या देवार्चन में थापा लगाते हैं (४२; ५५)

ओ

ओप—आभा; कांति; चमक (३५)
ओपी—कांतिमान (४२)

क

कंचन—सुवर्ण (७; २२; ३८; ४९)
कंचन कै भाजन—सुवर्ण-पात्र (७)
कंज—कमल (५८)
कंठसरी—(कठसिरी)—कंठी (३६)

कच—केश; बाल (१; १३; ५१)
कचोरा—कटोरा; प्याला (२४)
कटाछि—कटाक्ष (१४)
कटि—कमर (४९; ६३)
कदन—मर्दन; विनाश (१३)
कदली—केले का पेड़ (५३)
कदली के मूल—केले का खंभा (५३)
कनक—सुवर्ण (८; ३२; ३७; ४०; ५८; ६५)
कनक-गिरन—सुवर्ण पर्वत (४४)
कनक-रसा—सुवर्ण की पृथ्वी (यहाँ नायिका का कपोल) (२१)
कपाट—किवाड़; दरवाजा (८)
कपोल—गाल (२१; ६३)
कमला—लक्ष्मी; श्री; शोभा (९; २७; ४०)
कमलाकर—शोभा का समुद्र (९)
कर—हाथ, किरण (४)
करअग्र—हथेली (३७)
करकस—सिकलीगर, सान धरनेवाला (१५)
करतल—हथेली (९; ३८)
करतार—कर्ता, विधाता (४)
करपल्लव—हथेली; हाथ की उँगलियाँ (४०, ६५)
करपल्लवी—हथेली; कर की उँगलियाँ (३९)
करभ—जंघस्थल (५३)
करवीर—कनेर पुष्प जो लाल होता है (६१)
करेरे—करडे, कठोर (५३)
कलंब—मुख (टीका के अनुसार) (३६; ६१)
कलधूत—सोना (५३)
कलधौत—कंचन, सुवर्ण (३३; ३९)
कलप-तरोवर—कलपवृक्ष (१६)
कलि (कल)—सुंदर, मनोहर (३६, ५६)
कलुष—पाप (४१)
कहिबे के काज—कहने के लिए (३५)
कहिबे कों—कहने के लिए (५१)

का

कातरी—काटनेवाली (६२)
कादंबिनी—घनघटा, मेघमाला (२)
कानन—बन (१)
काम—कामदेव (२३, ३३; ४६, ५०, ५९)
काम-कारिका—कोकशास्त्र की कथा (५९)
काम-कैवर्त्त—कामदेवरूपी मल्लाह (११)
काम-सर—कामदेव का तालाब (३९)
कासमीर—केसर (४०)

कि

किंदरा—कंदरा, गुफा (२४)
किलकन—हर्षध्वनि (१९)
किसार—(सं० 'कासार')—तालाब (१३)
किसोरी—कुमारी, नायिका (३९)

की

कीनी—की (३२)
कीन्हौ—किया है (३३)
कीर—तोता (६३)

कु

कुंदन—सुवर्ण (३७)

कुंदन कनक दंड—सोना, जेवर आदि (३७)

कुंभ—कलश, घड़ा (४६)

कुच—स्तन (५१)

कुटिका—कुटी, झोंपड़ी (४६)

कुबेनी—मछलियाँ रखने की टोकरी (१५)

कुरंग—हिरन (काव्यरूढ़ि के अनुसार हिरन चंद्रमा के रथ के वाहन हैं) (६, ७, १२, १६, २२)

कुरंग-रथ—मृगरथ, चंद्रमा का रथ (६)

कुलदेव-द्विज—कुल के पुरोहित (६०)

कुलह—टोपी, शिकारी चिड़ियों की आँखों का ढक्कन (४६)

कुलाचल—पर्वत (४५)

कुसुम—श्वेत पुष्प (३, ३०)

कुहू—अमावस (१)

कू

कूपिका—छोटा कुआँ (१३)

कूल—किनारा (९, ३९)

के

केतन—ध्वजा, चिह्न (१२)

केदार—क्यारी (९, १९)

केहरी कुमार—शेर का बच्चा (५४)

कै

कैवर्त्त—केवट; मल्लाह (११)

को

कोकनद—लाल कमल (११;३२; ३५;३७;५८)

कोकसाला—चकवे का घर (कुचरूपी चकवे का घर) (४६)

कोप—सूर्य (१)

कोर—करोड़ों (३५)

कोरिका—कली (४४;६१)

कोस—भंडार; कोष (१६)

क्रा

क्रांति—कांति; दीप्ति (१९)

ख

खंजन—पक्षीविशेष (यहाँ 'नेत्र') (८)

खलेल—गुच्ची (५०)

खिन ही—क्षण ही में (३५)

खुरसान (खरसान)—अस्त्र पैना करने की सान (१२;२३)

खोदी—खाईं (२०)

ग

गंडमंडल—कपोल; गाल (१९;२०)

गंधकली—चंपा की कली (३१)

गयंद—हाथी (४३)

गरजी (फा०)—गरजमंद; इच्छुक; मतलबी (५६)

गरल—विष (४४)

गहर—गहरा (५२)

गा

गाड—गड्ढा (२०;४७;५२)

गात—(सं० 'गात्र')—शरीर (५२)

गावनी—गानेवाले (६०)

गु

गुदकारा—गुदगुदा; मांसल (५२)

गुन—डोरी (१;४१)

गुमान—घमंडी (५१)

गुराई—गुरुता; बड़ाई (६७)
गुरुबंधु—बड़ा भाई (६)
गुलाब के प्रस्वेद कन—इत्र (३१)
गुही—गूँथी (३)

गे

गेह—(सं० 'गृह')—घर।(१७)

गै

गैंवर—हाथी (५२)
गैनी—मार्ग; भूमि (४०)

गो

गोरत्व—गौर वर्ण (६७)
गोलिका—नेत्रतारिका (६१)

ग्र

ग्रह (सं० 'गृह')—घर (३०)
ग्राम—समूह (१)
ग्रीव—गर्दन; गला (३६)

घ

घटि—घटकर (५४)
घनसार—कपूर (४)
घाती—घात करने वाले (६०)

घ्रा

घ्रान—१. सुगंध; २. समूह (?) (८)

च

चंचरीक—भ्रमर (५०)
चंद—चंद्रमा (यहाँ मुखरूपी चंद्रमा) (४)
चंद्रहास—खड्ग; रावण की तलवार (२९)
चकडोर—चकरी खिलौना (४८)
चकवै—चक्रवर्ती राजा (१८)
चक्कवै— „ „ (२३)
चतुरानन—ब्रह्मा (२१;३२)
चतुवाँ—चतुराई से।(३२)
चरन—पैर (यहाँ 'चंद्ररथ का पहिया') (१८)

चा

चारु—सुंदर (१;९;२६; ३२)

चि

चितवन—दृष्टि; नजर (१४)
चितेरे—चित्रकार (२१)
चितौन—देखते ही; दृष्टि (५१)
चिबुक—ठोढी (३२;३३;६४)
चिलक—कांति; द्युति (१९)

ची

चीर—वस्त्र (५१;६५;६६)

छ

छंद—(१५)
छपाकर (सं० 'क्षपाकर')—चंद्रमा (२; १९)
छबिनि—शोभा (६२)
छबीलो—सुंदर (१७)

छा

छाजत—शोभायमान है (१७)

छि

छिति (सं० 'क्षिति')—पृथ्वी (१०; ४०)
छितिधर—(सं० 'क्षितिधर')—राजा (१०)
छिनक में—क्षण में (६६)

छी

छीन—क्षीण; दुर्बल (४९)
छीनो—क्षीण; सूक्ष्म (३३)
छीरनिधि—क्षीरसागर (१०)

छे

छेनी—लोहा, पत्थर आदि काटने का लोहे का हथियार (४१)

ज

जंबुद—सोना (टीका के अनुसार) (३६)

जँभात—अलसाता है (३५)

जग—संसार; जगत् (३४)

जगमगत—चमकती है (२३)

जठर अगन—जठराग्नि (४८)

जठर अगन आभा—जठराग्नि का धुआँ (४८)

जमल (सं० 'यमल')—दो; जोड़ा; युग्म (४५; ४७)

जस—यश (५)

जा

जातरूप—सुवर्ण (१८;२४)

जावक—महावर; अलता (५८;६०)

जामी—उत्पन्न हुई (२)

जामैं—जनमे हैं (४३)

जि

जिते—जितने (६५)

जिहि—जिसे (५१)

जी

जीतिबे कों—जीतने के लिए (३;१०)

जु

जुग—दो (२;७;९;११;२२)

जुग मीन—दो मछलियाँ (१३)

जुगल—दो (२;५३)

जो

जोबन—यौबन (२०)

जोस—जोश (१६)

जोहैं—देखते हैं (१४)

जोह्न—(सं० 'ज्योत्स्ना')—चाँदनी (३४)

झ

झला—झलक (६१)

झा

झाईं—झलक; परछाहीं (३२)

झी

झीनी—पतली; महीन (५१)

ड

डंक—लेखनी की नोक; नीब (२१)

डग—क़दम (५१)

डगुलात—डगमगाता; डिगता (४९)

डा

डाँवाडोल—चलबिचल (४९)

डाभ—दर्भ; कुश (२५)

त

तंत्र—वशीकरण मंत्र (३९)

तंबोर—(सं० 'ताम्बूल')—तंबोल; पान (२७; ६४; ६६)

तन—शरीर (यहाँ 'स्तन'?) (६६)

तनक—थोड़ा-सा; छोटा-सा (३३; ३९)

तन-सदन—तनरूपी घर (४७)

तनुता—देह (४४)

तनौत है—विस्तार होता है (१४; २२)

तपकुंड—अग्निकुंड; यज्ञकुंड (२४)

तपधन—तपस्वी (२६)

तपा—तपस्या (५१)

तबल—बड़ा ढोल; डंका (५८)

तम—अंधकार (२; १०; २१; ३३)

तमराज—सघन अंधकार (१)
तरंग—लहर (४९)
तरंगनी—नदी (५०)
तरकस—बाणों का भाता; तूणीर (१५)
तरफैं—तड़प रहे हैं (१३)
तरल—चंचल (२३)
तरवन—तरौना; कर्ण कुंडल (१५)
तरवर—वृक्ष (३७)
तरोटा—जल का भँवर (५२)
तरोना—कर्ण कुंडल (२३)
तरोवर—तरुवर; वृक्ष (५)
तलप—(सं० 'तल्प') पलंग; चारपाई; सेज; शय्या (५; २७; ५७)
तव—तुम्हारा (४४)
तर्पण—पितरों का जलदान (२४)

ता

ताँत—तंतु; तार (४८)
ताग—डोरा (५१)
तापस—तपस्वी (२४)
तामस—तमोगुण (३)
तामैं—उसमें (३२)
तार—तंतु (४७)

ति

तिय के—स्त्री के; नायिका के (२१)
तिरत—तैरता है (१०)
तिरोछा—पगतल (५७)

ती

तीखै—तीक्ष्ण (२३)
तीनौ पुर—त्रैलोक्य; तीनों लोक (१९)
तीय—स्त्री; नायिका (२३; ३३; ५८)

तु

तुंग—बड़ा; ऊँचा (४९)
तुरंग—घोड़ा (५)
तुरसी— (१०)
तुला—तराजू (८)

तो

तोय—जल; पानी (५०; ५२)
तोहि—तुझे (१८)

त्र

त्रदस—(सं० 'त्रिदश')—देवता (१८)

त्रा

त्रान—रक्षण (८)
त्रायक—रक्षक (१३)
त्रायक-तिलक—दिठौना (१३)

त्रि

त्रिभुवन—तीनों लोक; त्रैलोक्य (३६)

था

थाती—स्थिरता (६०)
थान—शिवस्थान (२४)
थान कौ अरि—कामदेव (२४)
थापी—स्थापित की; ठहरायी (५)

थि

थिर—स्थिर (२४)

द

दंतधावन—दातौन की क्रिया (६४)
दमकत—चमकती है (३६)
दमकति—चमकती है (३७)
दरस—(सं० 'दर्श')—अमावस (२)
दरसत—दीखती है (३८)
दरी—गुफा (२२)
दर्पक—कंदर्प; कामदेव (२८)

दर्पन—(सं० 'दर्पण')—आईना (१०; १९; ६१; ६४)
दल—पंखुड़ी (११)
दल—पत्र; पुस्तक का पन्ना (५७)
दलियतु—चूर-चूर हो जाता है (५१)
दवंती (सं० 'दयिता')—नायिका (३१)
दसन—दाँत (६३)
दहबे—जलाने (६)

दा

दान—जल (२०)
दाम—माला (२८)
दामनी—बिजली (३७)

दी

दीप—द्वीप; टापू (१६)
दीपग—दीपक; दिया (१६)
दीपत—दीप्ति; शोभा (१६)
दीपति—चमकती; शोभायमान है (३१)

दु

दुंदुभी—नगाड़ा (४२)
दुकूल—दोशाला; दुपट्टा (३७)
दुखनिंदु—दुख का निंदक; दुःख का निवारक (६)
दुज—(सं० द्विज')—ब्राह्मण (१०)
दुज—(सं० 'द्विज') दाँत (३०)
दुजराज (सं० 'द्विजराज़')—चंद्रमा (यहाँ 'मुख') (२४; २९)
दुति—(सं० 'द्युति')—कांति; प्रकाश; शोभा (३; ३०; ३६; ३७)
दुनि—दुनिया; संसार (१९)
दुरति—छिपति है (३७)
दुरद—(सं० 'द्विरद')—हाथी (५३)
दुरद-कर—हाथी की सूँड (५३)
दुरेफ—(सं० 'द्विरेफ')–भ्रमर (२८)
दुलरी—दो लड़ोंवाली माला (३६)
दुहिता—कन्या (४८)

दे

देखिबेकों—देखने के लिए (१०, १७)
देखे—देखने से (३०)
देवतरु—कल्पवृक्ष (यहाँ 'देह') (३९)
देवधुनि—गंगा नदी, भागीरथी (११)

दो

दोहियतु है—दुखदायी है (३)

द्व

द्वीप—१. टापू, २. दीप, दीया (१०)
द्वै—दो (४३, ५५)

ध

धजा—ध्वजा (२२)
धनतापन—तपस्वी (टीकानुसार) (३१)
धर—भूमि (५५)
धरन—धरणी, भूमि (५)

धा

धाप—(सं० 'धावन')—दौड़ना (५)
धाम—घर (६६)

धू

धूप—अष्टगंध (३१)

धौ

धौरहर— (४२)

न

नंद के लला—श्रीकृष्ण (६१)
नखचंद—नखरूप चंद्रमा (६१)

नछित्र—नक्षत्र (४०)
नटवा—नट, चंचल बालक (१८)
नबल—दुवा, सुंदर (५२)
नरिंदु—(सं० 'नरेंद्र')—राजा (६)
नरेस—राजा (१९)
नलिनी—कमलिनी (४४)
नव नबला—नई उम्रवाली नायिका (१)
नवबति—नौबत, डंका (५९)
नवबाला—नई उम्रवाली नायिका (३)
नवीनी—निपजी हैं (४४)

ना

नाई—झुकाई (यहाँ 'पहनी') (१८)
नाए—नवाए, झुकाये (३०)
नाग—हाथी, सर्प (२०)
नाभ—नाभि (४७)
नाभ कूप—नाभिरूपी कुआँ (४८)
नायबे कौं—नवने के लिए, झुकाने के लिए (२०)
नार—नारी (१४)
नालिनि—कमल नाल (४०)
नासा—नाक (१८)
नासिका—नाक (११)
नासिका उडुप—नाकरूपी नौका (११)
नाह—नाथ, प्रियतम (१८, २१, ३८)

नि

निकंद—दूर करना, विनष्ट करना (३६)
निकट—पास (५४)
निकस—निकलकर (२०)
निकाई—सुंदरता (१०)
निगड—बेडी (१७)
निगम-धुनि—वेद-ध्वनि (६०)
निजु—आप, स्वयं, नायिका (३१)
निधान—कोष, निधि (२८)
निबान—मुक्ति (२०, ५०)
निमिष—१. पलक, २. क्षण (३८)
निरख—देखकर (३०, ६१)
निरहारी (निहारी ?)—सुंगध (टीकानुसार) (३१)
निलय—घर (२१)
निसंक—निःशंक; निःसंदेह (५१)
निसोस—(१६)
निहार—देखकर (२१)
निहारती—देखती है (५९)
निहारी—देखी (२७)
निहारे—देखे (१४)

नी

नीकी—अच्छी; भली (१८; ४१; ६०)
नीबी—कमरबंद; नाड़े की डोरी (५२)
नीलगिर—नील पर्वत (४)

नृ

नृमल—निर्मल; स्वच्छ; पवित्र (६३)

ने

नेम—नियम; निश्चय (३८)
नेह—स्नेह; प्यार (१७; २१)

नै

नैकु ही—थोड़ा सा ही (१४)

न्हा

न्हान—स्नान (२४)
न्हाय के—नहाकर (४१)

प

पंचबान—कामदेव (२; १२; १७)

पंचसाखा—पंचशाखाएँ (यहाँ 'पाँच उँगलियाँ') (३९)
पंछरा—(सं० 'पक्ष')—पंख (२)
पखानि— (९)
पट—वस्त्र (४६)
पचि करि—परिश्रम करके (३२)
पटु—चतुर (१८)
पट्ट—कपड़े; वस्त्र (६७)
पढ़ावनि—पढ़ानेवाले (६०)
पदपलव—सुकोमल चरण की उँगलियाँ (५९)
पदमपद—कमल की पदवी (१; ३१)
पदरहस—काव्यग्रंथ का रसास्वादन (२७)
पद्मा—लक्ष्मी (यहाँ 'शोभा') (४१)
पद्मासदन—लक्ष्मी का घर (यहाँ 'शोभा का घर'; देह) (४१)
पन्नग—सर्प (१; ३)
पपीलका—(सं० 'पिपीलिका')—चींटी (१७)
पपील-पाँति—चींटियों की कतार (४८)
पय—दूध (४)
पयभरे—दूध से भरे हुए (१०)
पयानेके (सं० 'प्रयाण')—जाने के; प्रस्थान के (४६)
पयालो—प्याला (२४)
पयोधर—स्तन (४२)
परखनिहारी—परखनेवाली (२७)
परन (सं० 'पर्ण')—पत्ता; पंखुड़ी (यहाँ 'उँगली') (३९)
परम—प्राचीन; श्रेष्ठ; अत्यंत (१२)
परमला—(सं० 'परिमल')—सुगंध (३१)
परस (सं० 'स्पर्श')—मिलाप (२)
परसत—स्पर्श करते ही (३५)
परिपातन—काटना; गिराना (२९)
पलब—पल्लव (यहाँ 'उँगलियाँ') (९)
पला—पलड़ा (८)

पा

पाँत—पंक्ति (४०)
पाग—पगड़ी (४७)
पाट—रेशम (३)
पाटल—पुष्पविशेष; पाढ़र का वृक्ष (१४)
पात—पत्ता (४७)
पातरि—वेश्या (८)
पातसाही—बादशाहत (३२)
पाति—पत्ता (४९)
पान (सं० 'पाणि')—हाथ (३१; ४५)
पान (सं० 'पर्ण')—पत्ता (४८)
पानिप—सुंदरता (३४)
पाय—पैर (५८)
पायक—सिपाही; लश्कर (३८)
पारद—पारा (२०)
पारस— (सं० 'पार्श्व')—पार्श्वनाथ (जैनियों के २३ वें तीर्थंकर जो काशी के इक्ष्वाकुवंशीय राजा अश्वसेन के पुत्र थे। (१८)
पारावार—समुद्र (४९)

पि

पिक—कोयल (६३)

पिय—प्रियतम (यहाँ 'श्रीकृष्ण') (६७)
पियूख (सं० 'पीयूष')—अमृत (२८)

पी

पीठ—सिंहासन (३३)
पीडरी (पिंडरी)—टाँग का पिछला भाग (५५)
पीत बास—पीला वस्त्र (यहाँ 'केसर') (८)
पीन—पुष्ट; कठोर (४२)
पीबे कौ—पीने के लिए (८)
पीय-भान—प्रियरूपी सूर्य (१२)

पु

पँहुची (पहुँची)—कलाई का एक गहना (४०)
पुरवन—(४७)
पुलिंद—जातिविशेष; भील (१३; ४५)
पुहिचाँनि—पहुँचा (६५)
पुहुप (सं०) पुष्प (२८)
पुहुप (सं०)—पुष्प (यहाँ 'हथेली') (३९)
पुहुपा (सं० 'पुष्प')—फूल (४५)

पू

पूत (सं० 'पुत्र')—लड़का (१)
पूतरी—१. आँख की पुतली; २. गुड़िया (८)
पूर—पूर्ण (३१)
पूरनमयंक—पूर्ण चंद्र (५६)

पे

पेखत—देखते (५६)
पेखियतु—देख पड़ते हैं (५४)

पैं

पैंड—मार्ग (६६)
पैंडक—एक कदम (६६)
पैने—तीखे; तीक्ष्ण (१७)

पो

पोखे—पोषित; पुष्ट (३७)
पोत—नौका (२२)
पोत—माला आदि की छोटी गुरिया या मनका (३६)
पोमनी—पद्मिनी; नायिका (८; ४२; ५५)

प्र

प्रथु—गाढ़ा (५४)
प्रबीन—चतुर (१२)
प्रम— (६३)
प्रमल— (सं० 'परिमल')—सुवास (६७)
प्रमुदान की (सं० 'प्रमदा')—स्त्रियों की (२०)
प्रसंसी—प्रशंसा करनेवाला (५९)

प्री

प्रीतबंदी—प्रीत को निभानेवाली (६२)
प्रीतम—प्रियतम (८)

प्रे

प्रेमदल—प्रेम का दल; प्रेम का लश्कर (४७)

फ

फंद—फंदा; फाँस (७८)
फंदबे कौ—फँसाने के लिए (१८)

फू

फूलि फूलि—फूल-फूलकर; खिल-खिलकर (५८)

फूल लौं—फूल की तरह (६६)

फो

फोंक—फूंक

ब

बंचत—ठगते हैं (३८)

बंदन—कुंकुम; सिंदूर; बिंदी (६; ४३; ६४)

बंधुजीव—दुपहरिया का फूल (२४; ५८)

बछ (सं० 'वत्स')—लड़का (६)

बटुरारो—गोल (३५)

बड़िवा—बड़वानल; समुद्र की अग्नि (११)

बदन—मुख (१३)

बनबारी—कसौटी (जिस पर सोना चाँदी आदि धातुओं को परखने के लिए कसा जाता है) (४)

बपु—शरीर (३; ६)

बरकस—अकस; विरोध; शत्रुता (१५)

बरन—१. अक्षर; २. वर्ण; रंग (२८)

बलय—चूड़ी (४०)

बसन—वस्त्र (१०)

बसनि— (३२)

बसेखे— (६३)

बस्यो—रहा हैं (२१)

बा

बाँको—वक्र; टेढ़ी (१४)

बाज़—एक शिकारी पक्षी (४६)

बाढ़े— (९)

बातायन—झरोखा; खिड़की (१७)

बानी (सं० 'वाणी')—सरस्वती (२६; ४८)

बाफ—भाप (२१; ३१)

बाम—नारी; नायिका (१८)

बार—बाल; केश (१; ६५)

बार (सं० 'वारि')—पानी (५१)

बार—घेरा; पंक्ति (२६)

बार-लीक—पानी की लकीर (५१)

बारहै बरस—बारह वर्ष; गुरुगृह में शिष्य का अध्ययन-काल (५४)

बारि—घेरा; बाड़ (९)

बारिज—१. कमल; २. मोती (२६)

बाल—बाला; स्त्री (११)

बाला—नारी (४७)

बास—वस्त्र (८)

बासन—वास; वस्त्र (४)

बासर—दिन; दिवस (११)

बि

बिंदुका—छोटी बिंदी (६४)

बिंधि—विंध्याचल पर्वत (५४)

बिंब—फलविशेष (२५)

बिकच—खिला हुआ (यहाँ 'मूँदा हुआ') (३५)

बिकसत—विकसित होता है; प्रफुल्लित होता है (३५)

बिग्य—चतुर (५४)

बिचित्र—चतुर (३८)

बिछिया—पेर की उँगलियों का गहना या छल्ला (४९)

बिजुरी—बिजली (२६)

बितान—मंडप (२)

बिध (विधि)—विधाता; ब्रह्मा (२०; ३७; ३८; ५४; ५५)
बिध (विधि)—प्रकार (५४)
बिधाता—ब्रह्मा (३४)
बिधि—युक्ति से (३४)
बिधेना—वेधनेवाले (६१)
बिपंची—वीणा (२६; ४८)
बिपन (विपिन)—वन (४)
बिमल—निर्मल; स्वच्छ (२८; ४२)
बिराजत—शोभित है (३६)
बिसद (सं० 'विशद')—निर्मल; स्वच्छ; शुभ्र (१०)
बिसार—भूलकर (५०)
बिसार—विषाक्त करके (१५)
बिसिख—१. विशिष; बाण; २. विष से युक्त (१५; ४५)

बी

बीचका (सं० 'वीचि')—तरंग (२९)
बीर—तरौना; कर्णकुंडल (५१)

बु

बुध—पंडित (३८)

बे

बेल—सीमा-रेखा (१६)
बेह—वेध (१७)

बै

बैन—बचन; बोल (६३)
बैनी—बेनी; चोटी (३)

बो

बोम (९)

भ

भँवरी—पानी का चक्कर (२०)
भखन—भक्षण (४७)
भट—योद्धा (४९)
भर भयौ— (२१)
भया—लज्जा (८)

भा

भाग—नसीब; भाग्य (५)
भाग—ललाट ? (६७)
भाजन—बर्तन (१०; २४)
भान—सूर्य (१२; २३; ४३; ४८)
भानुदुहिता—सूर्यकन्या; जमुना (४८)
भामनी—स्त्री; नायिका (३७; ४८)
भामिनी—नारी; नायिका (५)
भारती—बानी; सरस्वती (११; ३१; ५८; ५९)
भावनी—वांछा (६०)

भु

भुवसुत—पृथ्वी का पुत्र मंगल (६)

भू

भूम—भूमि (४; ५७; ५८)

भो

भोगनी कुमार—नागिन का बच्चा (४७)
भोरी भामनी—नयी उम्रवाली नायिका (३७)

भौ

भौ—हुआ (६)

म

मंजरी—कलियाँ (४४)
मंत्र—सलाह (१५)
मखतूल—काला रेशम (१; ९; ४८)
मज्जन—स्नान (६४)
मझार—मध्य; बीच (२६)
मदन—कामदेव (१३; ३२; ३४; ५९)

मधि—मध्य में; बीच (१०)
मधु—बसंत (यहाँ 'देह') (३९)
मधुप—भ्रमर (३१; ३३)
मनमथ (सं० 'मन्मथ')—कामदेव (१८)
मन्मथराय—कामदेव (५५)
मनसाऊ—मन भी (४९)
मनसिज—कामदेव (१४)
मनिमय देव—मणिरूपी देवता; शालिग्राम (१०)
मनोभव—कामदेव (४७)
मयंकमुखी—चंद्रमुखी (५६)
मयूख—किरण (२८)
मयूख—किरण (यहाँ 'कांति') (५३)
मरकत—रत्नविशेष; नीलमणि; पन्ना (१; ७)
मराल—राजहंस (६२)
मरीचका (सं० 'मरीचिका')—किरण (२९)
मलयाचल—मलय पर्वत (३१)
महर—जुलाहा (४७)
महोछै—महोत्सव (५९)

मा

माधवी—मालती (यहाँ 'हाथ') (३९)
मान कै—मान का (१७)
मापत—नापता है (४)

मि

मित्र—१ सूर्य; २. प्रियतम (३५)
मिलन काज—मिलने के लिए (४५)

मी

मीन—मछली (११; १२; १५)
मीनकेतन—मीन यानी मछली; केतन यानी ध्वजा या चिह्न; मछली जिसकी ध्वजा या चिह्न है; कामदेव (१२; १५; ५७)

मु

मुकता—मोती (४१)
मुकता फल—मोती (२२)
मुकर—दर्पण, आईना (२१)
मुकुर—दर्पण; आईना (३४)
मुखचंद—मुखरूपी चंद्रमा (७; १२)
मुखताल—मुखरूपी तालाब (११)
मुखपंकज—मुखरूपी कमल (६; ३०)
मुखबारिज—मुखरूपी कमल (२६)
मुखराग—ताँबा (४३)
मुदित—प्रफुल्लित; प्रसन्न (५९; ६७)
मुद्रिका—अंगूठी (४०)
मुनिधर—मनधर ?; मुनीश्वर (६३)
मुखा—(६३)
मुखान—(६१)

मू

मूरी—मूली; जड़ (२७)
मूल—जड़ी (४३)

मृ

मृगनैनी—हिरन के नेत्र जैसे नेत्र-वाली युवती; नायिका (४०)
मृनाल—कमलनाल (३७)

मे

मेचक—काला; बादल; धुआँ (२; १३; ३६)
मेवास—किला; डेरा; निवास; रक्षा स्थान; घर (१७; ४२; ५६)

मै

मैन—मदन; कामदेव (१०; १३; ४२; ६४)

मो

मोतिसिरी—मोतियों की माला या कंठी (३६)

मोद—आनन्द (२२)

मोरचा—(फा०) किले के चारों ओर की वह खाई जहाँ युद्ध के समय सेना रहती तथा नगर की रक्षा करती है (१७)

मोहन—श्रीकृष्ण (५०)

मोहिबे को—मोहित करने के लिए (४२)

र

रंगरेजु—कपड़े रंगनेवाला (३३)

रंध्र—छिद्र (१७, ५०)

रंभा—अप्सराविशेष (५३)

रक्त—लाल (६१)

रजत-रेख—चाँदी की रेखा (४)

रतन खान—रत्नों की खान; सुमेरु पर्वत (२)

रताई—रक्तिम; ललाई (३; ५७)

रतिईस—कामदेव (४५)

रद—दाँत (३१)

रदन—दाँत (२६; ३२)

रद्दमत—मंदबुद्धि (५३)

रपटत—फिसलते हैं (१९)

रयन—रैन; रात्रि (१५)

रयन-दिन—रात-दिन (३८; ४५)

रवि-सारथी—सूर्य के रथ का सारथी; अरुण (६)

रसदल—कमल की पंखुड़ी (५७)

रसना-जिह्वा—(९; २७; २८; २९; ५४)

रसनायक—श्रृंगार रस (३३)

रसपति—शृङ्गार रस (शृङ्गार रस का वर्ण श्याम और हास्य रस का शुभ्र माना गया है) (४१; ४७)

रसराज—शृङ्गार रस (२१; ४४)

रसा—पृथ्वी (२७)

रसाल—आम (५)

रा

राग—प्रीति; अनुराग (अनुराग का रंग लाल माना जाता है) (६; २२; ४३)

राजत—शोभित है (१; ४)

राजति—शोभित है (४४)

राजस—रजोगुण (३; ३०)

राजे— (६३)

राजै—शोभित है (२; ३९)

राते—लाल (५८)

रि

रितिराज (सं० 'ऋतुराज')—बसंत (२)

रितिराज-पंछी—ऋतुराज बसंत का पंछी यानी कोकिल (२)

रु

रुचिर—मनोहर; सुंदर (५५; ५७)

रू

रूपपुर—सौंदर्यनगरी (१९)

रो

रोकबे कौं—रोकने के लिए (१७)

रोमराजि—रोमावली (४१)

रोस—रोष; क्रोध (१६)
रोहियतु है—(सं० 'रुह' धातु) बढ़ाती है (३)

ल

लकीर—लीक (११)
लच्छ—लक्ष्य; निशाना (१५)
लता—बेलि (३९)
लला—श्रीकृष्ण (५)
ललित—मनोहर (२७)
लसति—शोभित है (३६)
लसै—शोभित है (३२)

ला

लाग—लगाव (३३)
लाल—श्रीकृष्ण (६१)

लि

लिपि—पुस्तक (२७)

ली

लीक—लकीर (४)
लील—नीला; श्याम (२१)
लीले—निगले (६६)

लु

लुकांजन (सं० 'लोपांजन')—एक अंजन जिसका लगानेवाला अदृश्य हो जाता है (५१)

लो

लोचन—नेत्र (९; ५७)
लोचन-अनत—नेत्ररूपी शेषनाग (९)
लोचन-तुरग—नेत्ररूपी घोड़ा (५७)
लोल—चपल; चंचल (२१; २२; ३६)
लोहित—लाल (११)

लौ

लौं—तरह (४९)

वि

विद्रुम—मूँगा रत्न (२५)
विध—विधाता (५)
विधाता—निर्माता (१२)
विमल—निर्मल; स्वच्छ (६७)
विराजे—शोभायमान है (९)

वृ

वृष की कुमारिका—वृष की संक्रांति (२३)

श्री

श्री—लक्ष्मी (३०)
श्रीखंड—चंदन (३०)
श्रीय—लक्ष्मी (३२)

श्रु

श्रुतमंडल—कान (१५)

श्रो

श्रोन—नितंब (५४)

ष

षटतंत—षट्तंत्र; षट्शास्त्र (२७)

स

संकि—डरकर (४२)
संघाती—साथी (६०)
संजोय—जोतिवंत करके (५९)
संपुट—द्रोण; कटोरा (८)
संसरन (सं० 'संसरण')—मार्ग; राह (४५)
सटकारी—लंबी और चिकनी (३)
सटकारे—लंबे और चिकने (१)
सकुच—सकुचाकर (५८)
सकेल—एकत्रित करके; बटोरकर (१६)

सदन—भवन; घर; (२५; २६; ३२; ४१)
सनाल—नालसहित (५८)
सम—बराबर; समान (१६; ४२)
समर (सं० 'स्मर')—कामदेव (४२)
समर—१. स्मर, कामदेव; २. युद्ध (५९)
समीर—वायु (६६)
सरकस (फा० 'सरकश')—समर्थ (१५)
सरना—शरण (१६)
सरसुती—सरस्वती (४१; ६०)
सलाप—सिंहासन ? (५४)
सलिल—जल (२४)
सलिलगामिनी—नदी (४९)
ससि—चंद्रमा (२६)
ससिकर—चंद्रमा की (मुखरूपी चंद्रमा की) किरणें (४२)
ससिवत (सं० 'सस्यवती')—उपजाऊ (५)
सहसकर—सहस्र किरणें (२३)
सहोदर—सगे; दो (४२)

सा

साडुल— ? (९)
सातग—सत्वगुण (५७)
सातिग—सत्वगुण; सात्त्विक (रजोगुण का वर्ण लाल, तमोगुण का श्याम और सत्वगुण का शुभ्र माना गया है) (४; ४१)
सातुग—सत्त्वगुण (३)
साधिबे कौ—साधने के लिए (२८)
साने—सँवारे (१२)
सार—(२२)
सारस—कमल (१६; ३३)
साला—शाला (२)
सावक (सं० 'शावक')—बच्चा; बालक (४२)
साहुल ?—दीवारों की सीध नापने का राजों का उपकरण (९)

सि

सिखर—शिखर (२)
सिताई—श्वेतता; शुभ्रता (३;५७)
सिमाना (फा० 'शामियाना')—तंबू; डेरा (४६)
सिलह—हथियार; अस्त्र (४६)
सिलीमुख—भ्रमर (४०)
सिसुताई—लरिकाई; बाल्यावस्था (४३; ४६)
सिहात—प्रफुल्लित होते हैं (६१)

सी

सीव—सीमा (५८)

सु

सुक (सं० 'शुक')—तोता (यहाँ 'नासिका') (२५)
सुकृत—पुण्य (५)
सुखदान—सत्त्वरूपी जल (२०)
सुखदाय—सुख देनेवाली (५५)
सुखदाया—सुख देनेवाली (६२)
सुखदैन—सुख देनेवाले (६)
सुख-मधुकर—सुखरूपी भ्रमर (१७)
सुगंध-कली—चंपाकली (१६)
सुचि (सं० 'शुचि')—पवित्र (२९; ६७)
सुचिर—निर्मल; पवित्र (५५)

सुढ़ार—सुंदर, सुडौल (३२; ३७; ४६)
सुतधार—सूत्रधार; कारीगर (४७)
सुदेस—सुंदर (१९)
सुधा—अमृत (१९; २५)
सुद्ध—शुद्ध; पवित्र (४१)
सुपान—सोपान; पैंडी (३२)
सुफल—सुंदर फल (४२)
सुभ—शुभ (५९)
सुभग—सुंदर; भला (५६)
सुभर—भारी ? (६३)
सुभर—समूह ? (६७)
सुमन—फूल (१६; २९)
सुमिल—यथेच्छ; चाहिए जैसी (३२)
सुमेर—सुमेरु पर्वत (१६)
सुर आपगा—गंगा नदी (२९)
सुरगुरु—वृहस्पति (२९)
सुरन कौं—देवताओं का (१६)
सुरभान (सं० 'सुर'+'भानु')—सूर्य; इंद्र (टीकानुसार 'राहु' अर्थ है) (२; २१)
सुरभि— (६३)
सुरसरी—गंगा (४१; ६३)
सुरेख—सुंदर रेखासहित (२५)
सुलपताई—लघुता (५४)
सुलाक—छिद्र; छेद (५०)
सुवन—सुमन की तरह; प्रफुल्लित (५६)
सुषमा—शोभा (१९)
सुषिर—साँप का बिल (१७; २२)
सुसा—(सं० 'स्वसृ'–'स्वसा')–बहन (२६)
सुहाई—सुंदर (५९)

सू

सूत—तार; धागा (१)
सूधी—सीधी; सरल (१४)
सूरसुता—सूर्यपुत्री; यमुना (४१; ४२)

से

सेज—शय्या (४६)
सेतकंठ—सदाशिव (४४)
सेनी (सं० 'श्रेणी')—पंक्ति (४०)

सो

सोभा-तरु—शोभारूपी वृक्ष; देहरूपी शोभा-वृक्ष (४२)
सोभा-सुर-सदन—देवताओं का शोभा-रूपी भवन (१७)
सोभै—शोभित है (५७)
सोहियतु है—शोभायमान है (३; ३०)

सौ

सौंधा—सुगंध (१)
सौरभ—सुगंध (७; १६)

स्र

स्रोत—झरना (२२)

ह

हंस—सूर्य (२२)
हमेल—स्त्रियों के गले की सिक्कों की माला (६५)
हरत—दूर करते हैं (६०)
हरिराय—श्रीकृष्ण (४१; ५७)
हसत—१. हाथ; २. हस्त नक्षत्र (४०)

हा

हासिरस—हास्य रस (हास्य रस का वर्ण शुभ्र माना गया है) (४)

हि

हिरदै—हृदय में (४१)

ही

हीय में—हृदय में; मन में (३५)
हीयौ—हृदय (५१)

हे

हेमकूट—सुवर्ण का टुकड़ा; हिमाचल के ऊपर की एक चोटी (२)

परिशिष्ट : २

प्रतीकानुक्रम

(अकारादि वर्ण क्रमानुसार छंदों की अनुक्रमणिका)

	छंद क्र.	पृष्ठ
अ		
१—अलप अधर कटि मुखा अलप ऐन	—६३	९२
२—अवली अलिन नलिनिनि की कोरिका किधौं	—४४	७८
आ		
३—आनन की ओप कहिबे के काज बलभद्र	—३५	७१
क		
४—कचन के फंद परे षंजन तरफैं किधौं	—१३	५४
५—कदली के मूल हैं सु ऊष ते सहित एतौ	—५३	८५
६—कनक बरन कोकनद के बरन ओर	—३२	६८
७—कमल बदन मधि कमला के काज रचि	—२७	६५
८—कमला ज्यूं आलय लिपाए कासमीर सो कि	—४०	७४
९—करि दन्त धोवन उबटन उबट अंग	—६४	९३
१०—काम के केदारन की आयस की कीनी वारि	— ९	५१
११—किधौं अनुराग राग रागनि को सुमनि जु	—३०	६७
१२—किधौं उदियाचल उदोत राजी जोबन कौ	—४३	७८
१३—किधौं कुन्दकलिका की अवली अनूप किधौं	—२६	६४
१४—किधौं चतुरानन चितेरे चित्र कीनो तबैं	—२१	६०
१५—किधौं दुजराजन की तपस्या कौ तेज यह	—२९	६६
१६—किधौं मुष दुजराज तर्पन को भाजन है	—२४	६३
१७—किधौं बंधुजीव सेवैं चरन सुगंध काज	—५८	८८
१८—किधौं बैंस बेलबे के बेलन बनाए बिधि	—५५	८६
१९—किधौं मन बेधन बनाए बिधैं बिधेना कि	—६१	९०
२०—किधौं श्रुतिमंडल कुबेनी देष गतागत	—१५	५६
२१—किधौं सिसुताई के पयाने के सिमाने ताने	—४६	७९

	छंद क्र०	पृष्ठ
च		
२२–चन्द के चरन पर उपज्यो तनक तम	—३३	६९
छ		
२३–छबिनि की छाया सब सुषन की सुषदाया	—६२	६८
ज		
२४—जटत जराय जगमगत सहसकर	—२३	६२
ड		
२५—डाभ के से चीरे होठ अलप सुरेष अति	—२५	६३
त		
२६—तन तरवर की उभय साषा बलभद्र	—३७	७२
२७—तम के बिपिन मैं सरल पंथ सातिग कों	— ४	४७
२८—ताग सो तपा सो बार लीक सौ लुकंजन	—५१	८३
२९—तेरे इन जुगल उरोजन की सन्धि किधौं	—४५	७८
३०—त्रिभुवन रूप की त्रिरेषा तीनो मोहिनी की	—३६	७१
थ		
३१—थापी विध जस की जनम भूमि ससिवत	— ५	४८
द		
३२—दरस दरस कौ परस होत बलभद्र	— २	४६
न		
३३—नांही नांही करे तऊ ऊढ़ा नार बलभद्र	—५२	८४
३४—नैकु ही निहारे नैन नायिका नवीन सुकिया नार	—१४	५५
३५—नैन नटवान के निकसबे की कुंडरी कि	—१८	५८
३६—नवबति गति की कि रति की दुहाई कांम	—५९	८९
प		
३७—पयभरे भाजनन तिरत मधुप मध्य	—१०	५२
३८—परम प्रबीन मीनकेतन के मीन किधौं	—१२	५३
३९.—पलिका तैं पाव जो धरत धांम धरती मैं	—६६	९४
४०.—पाग रसपति को बनन नाभ गाड़ ताते	—४७	८०
४१—पाटल नयन कोकनद के से दल दोऊ	—११	५३
४२—पातुर पुतरि मानो धारे पीत बास कैधौं	— ८	५१
४३—पांनिप मदन कौ बदन झलकत अति	—३४	७०

	छंद क्र०	पृष्ठ
४४—पारावार रूप की तरंग तंग बलभद्र	—४९	८२
४५—पूर परमला मलयाचल उरोजन की	—३१	६८
फ		
४६—फूले मधुमालती के पहुप परन किधौं	—३९	७४
ब		
४७—बपुबच्छ सो लगायो भायो गुरबंधु जानि	— ६	४९
४८—बिमल बरन की है किधौं ए पहुप दाम	—२८	६६
४९—विष की लता सी बिन पान भान दुहिता सी	—४८	८१
५०—बेनी भाल माग श्रुत नासिका के बलभद्र	—६५	९४
५१—बैनी नवबाला की बनाय गुही बलभद्र	— ३	४७
भ		
५२—भवरी परत जल जोबन के ज़ोर किधौं	—२०	६०
५३—भारी घन नितंब प्रसु प्रेषियतु कटि नि-	—५४	८५
म		
५४—मंगल कलस मकरन्द भरे बलभद्र	—४२	७६
५५—मरकत-सूत किधौं पन्नग के पूत किधौं	— १	४५
र		
५६—रूप के अपायन मै राषी है धजा उतार	—२२	६१
ल		
५७—लाज के संघाती किधौं घाती मुनि ध्यांननि के	—६०	९०
५८—लाल गुन मुकुता सुरसरि सरसुती सी	—४१	७५
स		
५९—सज्जनता सीलता सलजता सुन्दरताई	—६७	९५
६०—सातग सिताई रजगुन की रताई मानो	—५७	८८
६१—सुंदर छबीली प्यारी तेरे करतल एतो	—३८	७३
६२—सुषमा भरत भरे पेम ही कि साचै ढरे	—१९	५९
६३—सुभग सिंगार लोक सुन्दर सुंवन मन	—५६	८७
६४—सोभा की तरंगनी के तोय को भँवर किधौं	—५०	८२
६५—सोभा की सकेल ऊँची बेल बाँधी बलभद्र	—१६	५७
६६—सोभा सुर सदन कौ बातायन बलभद्र	—१७	५७
६७—सौरभ सुगन्ध स्वास चंपकली नासिका को	— ७	५०

परिशिष्ट : ३

नामानुक्रमणिका

ग्रंथकार

(नाम के आगे कोष्ठक में पृष्ठांक दिये हुए हैं)

कालिदास—(११)
केशवदास—(४, ५; १३, १६)
खुमान—(१४, १६)
गंग—(१६)
गुलाम नबी—(१८)
गोकुल—(१४, १८)
गोकुलनाथ—(१६)
गोपाल कवि—(६, २९)
गोपाल लाल—(२७)
गोपीनाथ—(१६)
ग्रियर्सन जॉर्ज—(५)
ग्वाल—(१७)
चतुर्वेदी, जवाहरलाल—(२६)
चतुर्वेदी, राजेश्वरप्रसाद—(८)
चौधरी, सच्चिदानंद (डॉ०)—(९)
जयकृष्ण—(५)
जयदेव—(११)
जायसी—(१५)
तुलसीदास—(१५)
तोष—(१६)
त्रिपाठी, रामनरेश (पं०)—(६)
त्रिवेदी, कालिदास—(१६)
देव—(१६)
द्विवेदी, राजेन्द्र—(१३)
धनंजय—(८)
ध्रुवदास—(१६)
नंददास—(१५)
नगेन्द्र (डॉ०)—(२)
नागरीदास—(१६)
पजनेस—(१६)
प्रतापसाहि—(१४, १६, २७)
प्रेमसखी—(१६)
बलभद्र—(५, ७)
बिहारी—(१६)
भरतमुनि—(७, ८)
भानुदत्त—(८)
भिखारीदास—(१६)
भोज—(८)
मणिदेव—(१६)
मणिराम (या मनिराम)—(२७)
मम्मट—(८)
मान—(१६)

मिश्र, काशीनाथ—(५)
मिश्र, कुलपति—(१६)
मिश्र, कृष्णदत्त—(५)
मिश्र, केशव—(५, ८)
मिश्र, भगीरथ (डॉ०)—(२)
मिश्र, विश्वनाथप्रसाद—(९,१०,११)
मिश्र, सुखदेव—(१६)
मिश्र, सूरति—(१६)
मीराँबाई—(१५)
मुबारक अली—(७, १६)
मोहणोत, चंद्रसेन—(२७)
रत्नाकर, जगन्नाथदास—(२५)
रत्नाकर शांति—(१०)
रसराम (रसरास ?)—(२८)
रसलीन—(१६)
रुद्रट—(८)
रुद्रभट्ट—(८)
रुय्यक—(८)
रूपगोस्वामी—(१२)
लछिराम—(१७)
लीलाधर—(१६)
वर्मा, कृष्णचंद्र (डॉ०)—(३)
वर्मा, रामकुमार (डॉ०)—(१०,११)
वाग्भट्ट (द्वितीय)—(८)
वाजपेयी, चंद्रशेखर—(८,१६)
वात्स्यायन—(८)
विद्यापति—(१२)
विश्वनाथ—(८)
व्यास—(८)
शंकराचार्य (श्रीमत्)—(१२)
शर्मा, शिवकुमार (डॉ०)—(११)
शुक्ल, रामचंद्र (आचार्य)—(६)
सिद्धशांति—(१०)
सीतल—(१६)
सूरदास—(१५)
सूरि, हेमचंद्र—(१०)
सेंगर, शिवसिंह—(५)
सेनापति—(१६)
हरिऔध—(२,९,११)

परिशिष्ट : ४

नामानुक्रमणिका

ग्रंथ

(नाम के आगे कोष्ठक में पृष्ठांक दिये हुए हैं)

अग्निपुराण (व्यास)—(८)
अलक-शतक (मुबारक अली)—(७,१६)
उज्ज्वल नीलमणि (रूपगोस्वामी)—(१२)
कविता-कौमुदी (पं० त्रिपाठी)–(३,६)
कवित्त (जयकृष्ण कवि)—(५)
कवित्त रत्नाकर (सेनापति)—(१६)
कविप्रिया (केशवदास)—(४,११)
कामसूत्र (वात्स्यायन)—(८)
कुमारसंभव (कालिदास)—(११)
कृष्णजू को नखशिख (ग्वाल)—(१७)
कृष्णलीलामृत—(१२)
केशवदास : जीवनी, कला और कृतित्व (डॉ० किरणचंद शर्मा)—(३)
गीत-गोविन्द (जयदेव)—(१०)
गुलजारे चमन (सीतल)—(१६)
गोवर्द्धन सतसई की टीका (बलभद्र)—(६)
चंडीशतक—(१२)
छंदोशास्त्र (हेमचंद्र सूरी)—(१०)
जुगल नखशिख (प्रतापसाहि)—(१६)
जॉर्ज ग्रियर्सनकृत हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास (सं० किशोरी लाल गुप्त)—(२)
तिलकशतक (मुबारक अली)–(७,१६)
दशरूपक (धनंजय)—(८)
दूषण-विचार (बलभद्र)—(६,७)
देशी नाममाला (हेमचंद्र सूरी)–(१०)
नखशिख (केशवदास)—(१४,१६)
नखशिख (नागरीदास)—(१६)
नखशिख (मान)—(१६)
नखशिख (चंद्रशेखर वाजपेयी)–(१६)
नखशिख (तोष)—(१६)
नखशिख (कुलपति मिश्र)—(१७)
नखशिख (देव)—(१६)
नखशिख (सुखदेव मिश्र)—(१६)
नखशिख (पजनेस)—(१६)
नखशिख (लीलाधर)—(१६)
नखशिख (सूरति मिश्र)—(१६)
नखशिख (कालिदास त्रिवेदी)–(१६)
नखशिख (गंग)—(१६)

नखशिख (गुलाम नबी 'रसलीन')—(१६,१८)
नखशिख (गोकुल)—(१४,१८)
नखशिख (संत बख्श 'बंदीजन')—(१८)
नखशिख (प्रतापसाहि)—(२७)
नखशिख संग्रह—(३०)
नखशिख हजारा—(३०)
नाट्यशास्त्र (भरत मुनि)—(७)
पदावली (विद्यापति)—(१२)
पद्मावत (जायसी)—(१५)
प्रबोध चंद्रोदय (कृष्णदत्त मिश्र)—(५)
प्राकृत व्याकरण (हेमचंद्र सूरि)—(१०)
बलभद्री व्याकरण (बलभद्र मिश्र)—(६)
ब्रज साहित्य का इतिहास (डॉ०सत्येंद्र)—(२)
ब्रजसाहित्य का नायिका-भेद (प्रभु दयाल मित्तल)—(३७)
ब्रजभाषा-रीतिशास्त्र-ग्रंथ कोश (जवाहर लाल चतुर्वेदी)—(३७)
भागवत-भाष्य (बलभद्र मिश्र)—(६)
मधुप्रिया (पजनेश)—(२८)
महेश्वरविलास (लछिराम)—(१७)
मिश्रबंधु विनोद (मिश्रबंधु)—(२)
रसकलस (हरिऔध)—(९,११)
रसविलास (बलभद्र)—(६)
राधाजी का नखशिख (गोकुलनाथ, गोपीनाथ, मणिदेव)—(१६)
रामचंद्रिका (केशवदास)—(४)
रामचरितमानस (तुलसीदास)—(१५)
रीतिकालीन कविता एवं शृंगाररस विवेचन (डॉ० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी)—(३)
रीतिकालीन कवियों का काव्यशिल्प (डॉ० महेन्द्रकुमार)—(३)
रीतिकाव्य में शृंगार-निरूपण (सुखरूप श्रीवास्तव)—(३)
रीतिकाव्य-संग्रह (डॉ० जगदीश गुप्त)—(३)
रीतियुगीन काव्य (डॉ० कृष्णचन्द्र वर्मा)—(३)
वक्रोक्ति पंचाशिका—(१२)
विज्ञानगीता (केशवदास)—(४)
विष्णुकेशादि पादान्त (शंकराचार्य)—(१२)
विष्णुपादादि केशान्त (शङ्कराचार्य)—(१२)
वैद्य-विद्या-विनोद (बलभद्र)—(५)
शिखनख (केशवदास)—(१६)
शिखनख (नागरीदास)—(१६)
शिखनख की टीका (गोपाल कवि)—(२७)
शिखनख दर्पण (गोपाल कवि)—(२७)
शिखनख शृंगार (बलभद्र)—(६)
शिख केशादि पादान्त (शङ्कराचार्य)—(१२)
शिवपादादि केशान्त (शङ्कराचार्य)—(१२)
शृंगारतिलक (रुद्रभट्ट)—(८)
शृंगारनिर्णय (भिखारीदास)—(१६)
शृंगार संग्रह—(३१)

श्रीराम तथा सीताजी का नखशिख (प्रेमसखी)—(१६)
षट्नारी षट्वर्णन (बलभद्र)—(५)
साहित्य का पारिभाषिक शब्दकोश (राजेंद्र द्विवेदी)—(१३)
सरोज-सर्वेक्षण (डॉ० किशोरीलाल गुप्त)—(२, २८)
साहित्य-दर्पण (विश्वनाथ)—(८)
सुंदरी तिलक—(३१)
सुदर्शन चरित्र (जैनाचार्य नयनंद)—(१०)
हनुमान्नाटक का अनुवाद (बलभद्र)—(६)
हनुमान नख-शिख (खुमान)—(१६)
हज़ारा (रसरास)—(२८)
हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण (१ला खंड)—(२, ४)
हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास (डॉ० भगीरथ मिश्र)—(२)
हिन्दी काव्यशास्त्र में रस-सिद्धांत (डॉ० सच्चिदानंद चौधरी)—(३)
हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास (हरिऔध)—(२)
हिन्दी रीति-परंपरा के प्रमुख आचार्य (डॉ० सत्यदेव चौधरी)—(३)
हिन्दी रीति-साहित्य (डॉ० भगीरथ मिश्र)—(३)
हिन्दी साहित्य (डॉ० धीरेंद्र वर्मा और व्रजेश्वर वर्मा)—(२)
हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ (डॉ० गोविंद शर्मा)—(२)
हिन्दी साहित्य का अतीत—शृंगारकाल (डॉ० विश्वनाथप्रसाद मिश्र)—(३)
हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास (डॉ० रामकुमार वर्मा)—(२)
हिन्दी साहित्य का इतिहास (डॉ० जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव और हरेंद्र प्रताप सिन्हा)—(२)
हिन्दी साहित्य का उत्तर मध्ययुग (राजकिशोर पांडेय)—(३)
हिन्दी साहित्य का इतिहास (रामचंद्र शुक्ल)—(२, ६)
हिन्दी साहित्य का इतिहास (रामशंकर शुक्ल 'रसाल')—(२)
हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास (डॉ० भगीरथ मिश्र और पं० रामबहोरी शुक्ल)—(२)
हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास—षष्ठ भाग (डॉ० नगेंद्र)—(२)
हिन्दी साहित्य कोश (भाग २) ज्ञानमंडल लि० वाराणसी—(३)

परिशिष्ट : ५

संदर्भ-ग्रंथ

१. **आचार्य केशवदास**—डॉ० हीरालाल दीक्षित, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

२. **आचार्य भिखारीदास**—डॉ० नारायणदास खन्ना, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

३ **कविता-कौमुदी**—(पहला भाग-हिन्दी) संपा० रामनरेश त्रिपाठी, हिन्दी मंदिर, प्रयाग।

४ **केशव का आचार्यत्व**—डॉ० विजयपालसिंह, राज्यपाल एंड सन्स, दिल्ली।

५ **केशव-ग्रंथावली** (खंड १ से ३)—संपा० डॉ० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद।

६. **केशवदास : जीवनी, कला और कृतित्व**—डॉ० किरणचंद शर्मा, भारती साहित्य मंदिर, दिल्ली।

७. **देव और उनकी कविता**—डॉ० नगेन्द्र, गौतम बुकडिपो, दिल्ली।

८. **नवरस**—बाबू गुलाबराय, आरा नागरी प्रचारिणी सभा, बिहार।

९. **नायक-नायिका भेद**—डॉ० राकेश गुप्त।

१०. **नायिका-भेद : उद्भव और विकास**—डॉ० कृष्णानन्द दीक्षित।

११. **ब्रज साहित्य का इतिहास**—डॉ० सत्येन्द्र, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद।

१२. **ब्रजभाषा साहित्य का नायिका-भेद**—प्रभुदयाल मीतल, अग्रवाल प्रेस, मथुरा।

१३ **ब्रजभारती**—प्रभुदयाल मीतल।

१४ **ब्रजभाषा साहित्य**—बाबू गुलाबराय।

१५. **ब्रजभाषा : रीतिशास्त्र ग्रंथकोश**—जवाहरलाल चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

१६ **भरत का नाट्यशास्त्र**—रघुवंश, प्रका० सुंदरलाल जैन, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।

१७. **मध्यकालीन शृंगारिक प्रवृत्तियाँ**—श्री परशुराम चतुर्वेदी।

१८. **मध्यकालीन हिन्दी काव्य में शृंगार-सामग्री**—डॉ० मालतीदेवी माहेश्वरी।

१९. **मिश्र-बन्धु विनोद** (भाग १ से ३)—गंगा पुस्तकमाला कार्यालय, लखनऊ।

२०. **रसकलस**—अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', हिन्दी साहित्य कुटीर, बनारस।

२१. **रसमंजरी**—कन्हैयालाल पोद्दार।

२२. **रसरत्नाकर**—हरिशंकर शर्मा, रामनारायणलाल, प्रयाग।

२३. **रसिक रसाल**—कन्हैयालाल पोद्दार।

२४. **राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज** (द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ भाग)—संपा० अगरचंद नाहटा, प्राचीन साहित्य शोध-संस्थान, उदयपुर।

२५. **रीतिकाल का पुनर्मूल्यांकन**—डॉ० जयभगवान गोयल—आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली।

२६ **रीतिकालीन कविता एवं शृंगार रस का विवेचन**—डॉ० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, सरस्वती पुस्तक सदन, आगरा।

२७. **रीतिकालीन रीतिकवियों का काव्यशिल्प**—डॉ० महेन्द्रकुमार, आर्य बुकडिपो, नई दिल्ली।

२८. **रीतिकालीन शृंगार-भावना के स्रोत**—डॉ० सुधीन्द्रकुमार।

२९. **रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि**—डॉ० शिवलाल जोशी, साहित्य सदन, देहरादून।

३०. **रीतिकालीन काव्य-सिद्धांत**—डॉ० सूर्यनारायण द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी।

३१. **रीतिकाव्य की भूमिका**—डॉ० नगेन्द्र, गौतम बुक डिपो, दिल्ली।

३२. **रीतिकाव्य में रूप-चित्रण**—डॉ० आर० पी० मित्तल।

३३. **रीतिकाव्य में शृंगार-निरूपण**—सुखरूप श्रीवास्तव, प्रगति प्रकाशन, आगरा-३।

३४. **रीति काव्य-संग्रह**—डॉ० जगदीश गुप्त।

३५. **रीतियुगीन काव्य**—डॉ० कृष्णचन्द्र वर्मा, कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद-३।

३६. **शिवसिंह सरोज**—संपादक डॉ० त्रिलोकीनारायण दीक्षित, हिन्दी विभाग, लखनऊ ।
३७. **सरोज-सर्वेक्षण**—डॉ० किशोरीलाल गुप्त, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद ।
३८. **साहित्यशास्त्र का पारिभाषिक शब्दकोश**—राजेन्द्र द्विवेदी, प्रका० आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली ।
३९. **हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों का संक्षिप्त विवरण** (प्रथम और द्वितीय खंड)---काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ।
४० **हि ी काव्य में नखशिख-वर्णन**—डॉ० गिरिराज किशोर ।
४१. **हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास**—डॉ० भगीरथ मिश्र, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ ।
४२. **हिन्दी काव्यशास्त्र में श्रृंगार रस-विवेचन**—डॉ० रामलाल वर्मा, हिन्दी अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली ।
४३. **हिन्दी काव्यशास्त्र में रस-सिद्धांत**—डॉ० सच्चिदानंद चौधरी, अनुसंधान प्रकाशन, कानपुर ।
४४. **हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास**—हरिऔध, पुस्तक भण्डार, लहेरिया सराय ।
४५. **हिन्दी में शब्दालंकार-विवेचन**—डॉ० देशराजसिंह भाटी, अशोक प्रकाशन, दिल्ली ।
४६. **हिन्दी रीति-परंपरा के प्रमुख आचार्य**—डॉ० सत्यदेव चौधरी, साहित्य भवन, प्रा० लि० ।
४७ **हिन्दी रीति साहित्य**—डॉ० भगीरथ मिश्र, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ।
४८. **हिन्दी साहित्य**—संपा० डॉ० धीरेन्द्र वर्मा और व्रजेश्वर वर्मा, हिन्दी साहित्य परिषद्, प्रयाग ।
४९. **हिन्दी साहित्य का अतीत** (श्रृङ्गारकाल)---विश्वनाथप्रसाद मिश्र, वाणी वितान प्रकाशन, वाराणसी ।
५०. **हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास**—डॉ० रामकुमार वर्मा, रामनारायण लाल, प्रयाग ।
५१ **हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास**—डॉ० भगीरथ मिश्र एवं पं० रामबहोरी शुक्ल, हिन्दी भवन, जालंधर, इलाहाबाद ।

५२. **हिन्दी साहित्य का इतिहास**—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

५३. **हिन्दी साहित्य का उत्तर मध्ययुग**—राजकिशोर पांडेय, हिंदी साहित्य भण्डार, लखनऊ।

५४. **हिन्दी साहित्य का इतिहास**—डॉ० जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव और हरेन्द्रप्रताप सिन्हा, कैलाश प्रकाशन, इलाहाबाद।

५५. **हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास**—(डॉ० जॉर्ज ग्रियर्सन कृत) सं० किशोरीलाल गुप्त, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी।

५६. **हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास** (षष्ठ भाग)—संपा० डॉ० नगेन्द्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

५७. **हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तियाँ**—प्रो० शिवकुमार शर्मा, अशोक प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली।

५८. **हिन्दी साहित्य और उसकी प्रमुख प्रवृत्तियाँ**—डॉ० गोविंदराम शर्मा, हिन्दी साहित्य संसार, दिल्ली।

५९. **हिन्दी साहित्य-कोश** (दूसरा भाग)—ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी।

———